HINDI KAHANIYON MEIN BAAL PATRA
(CHAYANIT KAHANIYON KE SANDARBH MEIN)

A Dissertation submitted during 2019 to the University

Of Hyderabad in partial fulfilment of the award of

MASTER OF PHILOSOPHY IN HINDI

2019

By

NAZNEEN KAUSHAR
(17HHHL13)

Supervisor
Dr. M. Anjaneyulu

Department of Hindi

School of Humanities

University of Hyderabad

Gachibowli, Hyderabad, 500046

Telangana, INDIA

हिंदी कहानियों में बाल-पात्र (चयनित कहानियों के संदर्भ में)

हैदराबाद विश्वविद्यालय में एम. फिल. (हिंदी) की उपाधि हेतु प्रस्तुत

लघु शोध-प्रबंध

2019

शोधार्थी

नाज़नीन कौसर

(17HHHL13)

शोध-निर्देशक

डॉ .एम. अंजनेयुलु

हिंदी विभाग, मानविकी संकाय

हैदराबाद विश्वविद्यालय,

हैदराबाद– 500046

तेलंगाना, भारत

DECLARATION

I, **NAZNEEN KAUSHAR** hereby declare that this dissertation entitled HINDI **KAHANIYON MEIN BAAL PATRA [हिंदी कहानियों में बाल-पात्र]** submitted by me under the guidance and supervision of Dr. **M. Anjaneyulu** is a bona-fide research work and is free from plagiarism. I also declare that it has not been submitted previously in part or in full to this University or any other University or Institution for the award of any degree or diploma. I hereby agree that my dissertation can be deposited in Shodhganga/ INFLIBNET.

Date: NAZNEEN KAUSHAR

Place: Reg.No.17HHHL13

Signature of the Student

CERTIFICATE

This is to certify that the dissertation entitled **HINDI KAHANIYON MEIN BAAL PATRA [हिंदी कहानियों में बाल – पात्र]** submitted by **NAZNEEN KAUSHAR** bearing Reg. No. **17HHHL13** in partial fulfillment of the requirements for the award of **Master of Philosophy** in **HINDI** is a bona-fide and plagiarism free work carried out by him under my supervision and guidance.

The dissertation has not been submitted previously in part or in full to this or any other University or Institution for the award of any degree or diploma.

Supervisor　　　　Head of the Department　　　　Dean of the School

प्रस्तावना

मुख्यधाराई कथा साहित्य के विविध पहलुओं का प्रतिनिधित्व मात्र वयस्क पात्रों ने ही नहीं किया, अपितु बाल पात्रों ने भी अपनी उपस्थिति दर्ज़ कराई है। एक शताब्दी से अधिक के अपने यात्रा क्रम में हिंदी कहानी ने अनेक पड़ाव देखें हैं एवं क्रमशः किस्सागो एवं मनोरंजन के धरातल से ऊपर उठकर जीवन यथार्थ से संबंध स्थापित किया है | हिन्दी कहानियों में बच्चों की भी एक दुनिया है जिसका मूल्यांकन अभी शेष है। इस विषय का चयन इसलिए किया गया क्योंकि बाल साहित्य के मूल्यांकन के नाम पर मात्र पंचतंत्र, हितोपदेश, जातक कथाएँ एवं पौराणिक कथाओं का मूल्यांकन किया जाता रहा है, जिसमें बच्चों के मनोवैज्ञानिक विकास के लिए ज़िम्मेदार कारकों की पड़ताल गौण है। जबकि आधुनिक बाल केंद्रित साहित्य, पारंपरिक बाल साहित्य से सर्वथा भिन्न है | पारंपरिक बाल केंद्रित कहानियों का उद्देश्य मात्र नैतिक शिक्षा तक ही सिमटकर रह गया जबकि वास्तविक धरातल पर नैतिक शिक्षा से भिन्न, समकालीन संदर्भ में बाल जीवन की पड़ताल आवश्यक है। अत: हिंदी कहानियों में बाल पात्रों के मार्फ़त उन परिस्थितियों को समझने की कोशिश की जा सकती है जिसके कारण बालकों का स्वस्थ मानसिक विकास नहीं हो पा रहा है।

अतः साहित्य की प्रत्येक विधा की तरह कहानी ने भी अपनी विकास यात्रा में जीवन के विविध पहलुओं को समेटने की कोशिश की है। मोटे तौर पर हिंदी कहानी में बाल पात्रों के दो प्रमुख आयाम चिन्हित किए जा सकते हैं - सक्रिय एवं निष्क्रिय बाल-पात्र। एक तरफ़ वे बालक हैं जो परिस्थितियों से संचालित होते आए हैं और दूसरी तरफ़ ऐसे बालक भी हैं

जिन्होंने परिस्थितियों को संचालित किया है | प्रेमचंद से लेकर चित्र मुद्गल तक बाल-पत्रों ने अपनी उपस्थिति दर्ज कराई है, किन्तु वे कहीं असंतुलित दाम्पत्य की दवा के रूप में चित्रित किए जा रहे हैं तो कहीं समाजार्थिक परिस्थितियों के दलदल में फँस कर मज़दूरी करने पर विवश है | बाज़ारवाद के अंधियारे में गोते लगाते ये बच्चे अजनबियत, अकेलेपन और कुंठा के शिकार होते चले जा रहे हैं। अतः शोध कार्य का मुख्य उद्देश्य हिन्दी कहानियों के माध्यम से बालकों की दशा एवं दिशा को तलाशना है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध को चार अध्यायों में विभक्त किया गया है |

प्रथम अध्याय के अंतर्गत मनोविज्ञान का संक्षिप्त परिचय देते हुए बाल जीवन के विकास की अवस्थाओं पर चर्चा की गई है, साथ ही लारेंस, कोलबर्ग, प्याज़े और ऐरिक्सन के बाल विकास संबंधी सिद्धांतों की भी चर्चा की गई है | भूमंडलीकरण के दौर में बाल जीवन के समक्ष आने वाली ग़रीबी, शिक्षा, पोषण, मज़दूरी एवं युद्ध जैसी विकराल समस्याओं पर विचार किया गया है। इस अध्याय में बाल साहित्य की पूर्व पीठिका के रूप में पंचतंत्र, हितोपदेश और पौराणिक कथाओं पर विचार व्यक्त किए गए हैं। इसके अतिरिक्त बाल केंद्रित साहित्य के रूप में साइंस फिक्शन पर भी टिप्पणी की गई है।

द्वितीय अध्याय में चयनित कहानियों का परिचयात्मक विवरण प्रस्तुत किया गया है |

तृतीय अध्याय के अंतर्गत दाम्पत्य जीवन के विभिन्न पहलुओं के संदर्भ में बाल-पात्रों का विवेचन किया गया है। विवाह-विच्छेद, एकल परिवार, संयुक्त-परिवार, अवैध प्रेमसंबंध एवं कामकाजी अभिभावक के सन्दर्भ में बाल जीवन के विभिन्न पहलुओं का विवेचन-विश्लेषण किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में भूमंडलीकरण एवं बाज़ारवाद के संदर्भ में बाल जीवन की दुविधाओं का चित्रण किया गया है | उपभोक्तावादी संस्कृति में बालकों के मूल्य - क्षरण को विज्ञापन, तकनीक एवं बजारवाद के संदर्भ में विश्लेषित किया गया है, साथ ही बाज़ारवाद के क्रूरतम औज़ार के रूप में बाल - श्रम को रेखांकित किया गया है।

मैं अपने शोध निर्देशक डॉ .एम. अंजनेयुलु की कृतज्ञ हूँ कि उन्होंने मुझे शोध कार्य के दौरान कार्य करने की पूरी छूट दी और मेरा उचित मार्गदर्शन किया, कठिन समय में मुझे ढांढस बँधाया। मैं अपने शोध सलाहकार, विभागाध्यक्ष प्रो. एस. चतुर्वेदी, डॉ. भीम सिंह एवं सभी गुरुजनों के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ | इस लघु शोध प्रबंध को लिखने के दौरान मुझे धैर्य देने तथा हौसला -अफज़ाई करने के लिए अपने माता - पिता का आभार व्यक्त करती हूँ। मित्र श्रुति पांडे, ऋतु राजपूत, आरती यादव और कुमुद रंजन मिश्रा और सभी मित्रों का आभार व्यक्त करती हूँ, जिन्होने शोध कार्य के दौरान सहायता प्रदान की |

धन्यवाद!

नाज़नीन कौसर

विषय सूची

प्रथम अध्याय - बाल जीवन : एक सैद्धांतिक चर्चा 1-64

1.0 बाल मनोविज्ञान परिभाषा एवं स्वरुप

1.1 मनोविज्ञान का अर्थ

1.2 मनोविज्ञान की परिभाषा

1.3 मनोविज्ञान के इतिहास का संचिप्त परिचय

1.4 मनोविज्ञान पर दर्शन का प्रभाव

1.5 मनोविज्ञान पर विज्ञान का प्रभाव

1.6 व्यक्तित्व विकास के संदर्भ में मनोविज्ञान की चर्चा

1.7 बाल मनोविज्ञान क्या है

1.7.1 बाल विकास की अवस्थाएं

1.7.2 बाल विकास के सिद्धांत

1.7.3 अपराध का मनोविज्ञान

1.7.3.1 बाल जीवन के समक्ष चुनौतियाँ

1.7.3.2 भूमंडलीकरण के दौर में बच्चों की दशा

1.7.3.3 कुपोषण

1.7.3.4 बाल तस्करी और बाल - श्रम

1.7.3.5 युद्ध का बाल जीवन पर प्रभाव

1.7.3.6 बाल श्रम सम्बन्धी क़ानून

1.7.3.7 बाल श्रम 2016 संशोधन के मुख्य तथ्य

1.7.3.8 बाल साहित्य की परंपरा

1.7.3.9 बाल पत्रिकाएँ : तब से अब तक

1.7.3.10 साइंस फ़िक्शन

द्वितीय अध्याय - चयनित कहानियों का परिचयात्मक विवरण 65-78

2.1 सौभाग्य के कोड़े

2.2 ईदगाह

2.3 छोटा जादूगर

2.4 एक और ज़िन्दगी

2.5 राजा निबंसिया

2.6 चकरघिन्नी

2.7 अनाड़ी

2.8 फोटोग्राफी

2.9 दिल्ली में

2.10 खेल

2.11 बहादुर

2.12 मामला आगे बढ़ेगा अभी

2.13 कुत्ते की पूँछ

2.14 गेंद

2.15 मिस पद्मा

2.16 मन की बात

2.17 बूमरैंग

2.18 एक दिन का मेहमान

तृतीय अध्याय - दांपत्य जीवन के सन्दर्भ में बालक 79-101

3.1 दाम्पत्य जीवन के सन्दर्भ में बालक

3.2 कामकाजी माता-पिता और बालक

3.3 विवाह विच्छेद और बाल जीवन

3.4 एकल परिवार में बालक

3.5 अवैध संबंधों से उपजी संतान

चतुर्थ अध्याय - भूमंडलीकरण एवं बाज़ारवाद के सन्दर्भ में बाल-पात्र 102-115

4.1 भूमंडलीकरण और बाज़ारवाद का परिचय

4.2 परिवार पर बाज़ारवाद का प्रभाव

4.3 तकनीक और बाल - जीवन

4.4 विज्ञापन में बढ़ती अश्लीलता और बालक

4.5 उपभोक्तावाद और मूल्य संक्रमण के दौर में बाल - जीवन

4.6 हिंदी कहानियों में बाल - श्रम

उपसंहार 116-120

सहायक-ग्रन्थ सूची 121-125

प्रथम अध्याय

बाल जीवन : एक सैद्धान्तिक चर्चा

1. बाल मनोविज्ञान परिभाषा एवं स्वरुप

मनोविज्ञान को अंग्रेज़ी में 'साइकोलॉजी' कहा जाता है, जिसके अंतर्गत मनुष्य के मानसिक कार्यों एवं व्यवहारों के वैज्ञानिक अध्ययन का समावेश किया जाता है | समाज शास्त्र या अन्य सामाजिक विज्ञान की तुलना में मनोवैज्ञानिक परंपराएं अस्पष्ट है । मनोविज्ञान में अध्ययन और अनुप्रयोग के कई क्षेत्र शामिल है, जैसे मानव विकास, स्वास्थ्य, खेल, उद्योग, मीडिया और क़ानून ।

मनोविज्ञान में प्राकृतिक विज्ञान के साथ - साथ सामाजिक विज्ञान और मानविकी के अनुसंधान भी शामिल है । शरीर विज्ञान, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र जैसे दूसरे विज्ञानों की भाँति मनोविज्ञान का केंद्र भी मनुष्य है, अतः मनोविज्ञान मानव मन का विज्ञान है ।

1.1 मनोविज्ञान का अर्थ :

अंग्रेज़ी भाषा में 'साइकोलॉजी' मनोविज्ञान को दर्शाता, इस शब्द की उत्पत्ति यूनानी भाषा के 'साइकी' (Psyche) तथा 'लोगस' (logos) शब्द से हुई है । 'साइकी' का अर्थ है 'आत्मा से' और 'लोगस' इसका अर्थ है 'अध्ययन या विचार विमर्श'। इस प्रकार दार्शनिकों ने सोलहवीं शताब्दी में ग्रीस नामक देश में इसके शाब्दिक अर्थ के अनुरूप इसे आत्मा का अध्ययन करने वाला विज्ञान माना । ईसा के 500 वर्ष पूर्व से 16वीं शताब्दी तक मनोविज्ञान के संबंध में यही अर्थ एवं धारणाएँ प्रचलित थी | समय

के साथ - साथ मनोविज्ञान के अर्थ में परिवर्तन होता रहा है | मनोविज्ञान के कई अर्थों का अवलोकन हम इस प्रकार से कर सकते हैं -

(क) मानव व्यवहार एवं विधान : मनोविज्ञान मानव व्यवहार का अध्ययन करता है | मनुष्य अपने जीवन में वातावरण के प्रति जो क्रिया व्यापार करता है, मनोविज्ञान उन सरलतम एवं जटिलतम परिस्थितियों में मनुष्य की क्रियाओं का अध्ययन करता है।

(ख) मन का विज्ञान : मध्ययुगीन दार्शनिकों ने मनोविज्ञान को मन - मस्तिष्क का विज्ञान बताया है, क्योंकि मस्तिष्क और उसके स्वाभाव का अध्ययन कठिन है इसलिए कोई भी दार्शनिक मस्तिष्क की प्रकृति और उसके स्वरूप को निश्चित नहीं कर पाया | अतः मनोविज्ञान को मात्र मन का विज्ञान मानने से अस्वीकार कर दिया गया |

(ग) चेतना एवं विज्ञान : मस्तिष्क के स्वरूप के संबंध में कोई स्पष्ट मत न होने के कारण कुछ विद्वानों ने मनोविज्ञान को चेतना का अध्ययन करने वाला विज्ञान माना है। 'विलियम जेम्स' ने मनोविज्ञान को चेतना के स्वरूप के संदर्भ में स्पष्ट करते हुये कहा है कि, "मनोविज्ञान चेतना की विभिन्न अवस्थाओं का वर्णन एवं व्याख्या करता है।"[1]

(घ) आत्मा का विज्ञान : यूनानी दार्शनिकों ने मनोविज्ञान को आत्मा का विज्ञान माना है, किन्तु सोलहवीं शताब्दी में इस मान्यता को अमान्य घोषित कर दिया गया और बीसवीं शताब्दी के आरंभ से मनोविज्ञान के अलग-अलग अर्थ का निरूपण किया जाने लगा | उतरोत्तर जिस अर्थ को मान्यता दी गई उसके अनुसार मनोविज्ञान व्यवहार का विज्ञान है|

---

[1] डॉ मंजु सिंह,मनोविज्ञन का इतिहास,पृष्ठ संख्या 3

1.2 मनोविज्ञान की परिभाषा :

प्राचीन काल से मध्यकाल तक एवं इस आधुनिक युग में भी विभिन्न विद्वानों ने मनोविज्ञान के संबंध में भिन्न - भिन्न परिभाषाएँ दी है -

वॉटसन के अनुसार "मनोविज्ञान व्यवहार का निश्चित या शुद्ध विज्ञान है।"[2]

मैक्डूगल के अनुसार "मनोविज्ञान आचरण एवं व्यवहार का यथार्थ विज्ञान है।"[3]

क्रो एंड क्रो के अनुसार "मनोविज्ञान मानव व्यवहार और मानव संबंधों का अध्ययन है।"[4] बोरिंग के अनुसार "मनोविज्ञान मानव प्रकृति का अध्ययन है।"[5]

इन सभी परिभाषाओं से यह ज्ञात होता है कि मनोविज्ञान का अर्थ मानव के मानसिक एवं शारीरिक क्रियाओं के अध्ययन से है | मनोविज्ञान वह शैक्षिक व अनुप्रयोगात्मक विधा है जो प्राणी के मानसिक प्रक्रियाओं, अनुभव तथा व्यक्त एवं अव्यक्त व्यवहार का क्रमबद्ध तथा वैज्ञानिक अध्ययन करता है। साथ ही प्राणी के मानसिक एवं दैहिक प्रक्रियाओं जैसे - चिंता, भाव आदि को वातावरण की घटनाओं के साथ जोड़कर अध्ययन करता है। इस परिपेक्ष्य में मनोविज्ञान को व्यवहार व मानसिक प्रक्रियाओं के अध्ययन का विज्ञान कहा जाता है।

1.3 मनोविज्ञन के इतिहास का संक्षिप्त परिचय : "आधुनिक मनोविज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की पड़ताल करने पर इसके दो रूप दृष्टिगोचर होते हैं। एक तो वैज्ञानिक

---

[2] hi.m.wikipedia.org

[3] hi.m.wikipedia.org

[4] मंजु सिंह,मनोविज्ञान का इतिहास,पृष्ठ संख्या 3

[5] मंजु सिंह,मनोविज्ञन का इतिहास, पृष्ठ संख्या 3

अनुसंधानों और अविष्कारों द्वारा प्रभावित वैज्ञानिक मनोविज्ञान तथा दूसरा दर्शनशास्त्र द्वारा प्रभावित दर्शन मनोविज्ञान ।"[6] प्राक्-वैज्ञानिक काल (Pre scientific period) में मनोविज्ञान दर्शन शास्त्र की एक शाखा थी । जब विल्हेल्म वुड ने 1879 में मनोविज्ञान की पहली प्रयोगशाला खोली तब से मनोविज्ञान दर्शनशास्त्र के चंगुल से छूटकर स्वतंत्र विज्ञान का दर्जा पा सकने में समर्थ हो सका ।

1.4 मनोविज्ञान पर दर्शन का प्रभाव :

मनोविज्ञान पर वैज्ञानिक प्रवृत्ति के साथ - साथ दर्शनशास्त्र का भी बहुत अधिक प्रभाव पड़ा है, वैज्ञानिक परंपरा तो बहुत बाद में आरंभ हुई । मनोवैज्ञानिक समस्याओं को दर्शनशास्त्र से संबद्ध करने वाले प्रथम विद्वान डेकार्टे (1596-1650) है । डेकार्टे ने मनुष्य तथा पशुओं में अंतर करते हुए बताया कि मनुष्य में आत्मा ही वह तत्व है, जो उसे मशीन की भाँति बनने से रोकता है और आत्मा के कारण ही मनुष्य में इच्छा शक्ति होती है । 'पिट्यूटरी ग्रंथि' परस्पर शरीर तथा आत्मा दोनों को प्रभावित करती है । डेकार्टे के मतानुसार मनुष्य के कुछ विचार जन्मजात होते है, उनका अनुभव से कोई संबंध नहीं होता । लायबनीत्स (1646-1716) के मतानुसार सम्पूर्ण पदार्थ 'मोनैक इकाई' से मिलकर बना होता है । उन्होंने चेतनावस्था को विभिन्न मात्राओं में विभाजित करके लगभग दो सौ वर्ष बाद आने वाले फ्राइड के विचारों के लिए एक बुनियादी पृष्ठभूमि तैयार की । लॉक (1632-1704) का अनुमान था कि मनुष्य के स्वभाव को समझने के लिए विचारों की आरंभिक अवस्था के बारे में जानना ज़रूरी है | उन्होंने विचारों के

---

[6] मंजु सिंह,मनोविज्ञन का इतिहास, पृष्ठ संख्या 4

परस्पर संबंध विषयक सिद्धांत प्रतिपादित करते हुए बताया कि विचार एक तत्व की तरह होते हैं और मस्तिष्क उनका विश्लेषण करता है | उनका कहना था कि प्रत्येक वस्तु का प्राथमिक गुण स्वंय उस वस्तु में ही निहित होता है। गौण गुण वस्तु में निहित नहीं होते बल्कि वस्तु विशेष को उसकी आवश्यक होता है | बर्कली ने कहा कि वास्तविकता की अनुभूति पदार्थ के रूप में नहीं वरन प्रत्यय के रूप में होती है | तत्पश्चात ह्यूम, हार्टल, स्टुअर्ट मिल, बेन, हरबर्ट आदि विद्वानों ने अपना मत प्रकट किया। जेम्स मिल तथा उनके पुत्र जॉन स्टुअर्ट मिल ने मानसिक रसायनी का विकास किया। इन विद्वानों ने साहचर्यवाद की प्रवृत्ति को औपचारिक रूप प्रदान कर 'वुंट' के लिए उपयुक्त पृष्ठभूमि तैयार की। 'कांट' ने समस्याओं के समाधान में व्यक्तिनिष्ठावाद की विधि अपनाकर बाह्य जगत के प्रत्यक्षीकरण के सिद्धांत में जन्मजातवाद का समर्थन किया। हारबर्ट (1776-1784) ने मनोविज्ञान को भिन्न स्वरूप प्रदान करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनके मतानुसार मनोविज्ञान अनुभववाद पर आधारित एक तात्विक मात्रात्मक तथा विश्लेषणात्मक विज्ञान है | उन्होंने मनोविज्ञान को तात्विक के स्थान पर भौतिक आधार प्रदान किया और लॉत्से (1817-1881) ने इसी दिशा में और आगे प्रगति की |

1.5 मनोविज्ञन पर विज्ञान का प्रभाव :

वैज्ञानिक मनोविज्ञान उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में आरंभ हुआ है | सन् 1860 ई. में फेंक्नर ने जर्मन भाषा में 'एलिमेंट्स ऑफ़ साइकोफिजिक्स' नामक पुस्तक प्रकाशित की, जिसमें उन्होंने मनोवैज्ञानिक समस्याओं को वैज्ञानिक पद्धति से अध्ययन करने की तीन प्रणालियों का विधिवत वर्णन किया : मध्य त्रुटि विधि, न्यूनतम परिवर्तन विधि तथा

स्थिर उत्तेजक भेद विधि। आज भी मनोवैज्ञानिक प्रयोगशालाओं में इन्ही प्रणालियों के आधार पर अनेक महत्वपूर्ण अनुसंधान किए जाते हैं | वैज्ञानिक मनोविज्ञान में फेंक्नर के बाद दो अन्य महत्वपूर्ण नाम है 'हेल्मोलत्स' तथा 'वुंट' | 'वुन्ट' ने 1879 ई. में लाइपजिग (जर्मनी) में मनोविज्ञान की प्रथम प्रयोगशाला स्थापित की। वुंट ने अनगिनत वैज्ञानिक लेख तथा महत्वपूर्ण पुस्तकें प्रकाशित करवा कर मनोविज्ञान को एक धुँधले व अस्पष्ट दार्शनिक वातावरण से बाहर निकाला। उसने मनोवैज्ञानिक समस्याओं को वैज्ञानिक परिवेश में रखकर उन पर नए दृष्टिकोण से विचार एवं प्रयोग करने की प्रवृत्ति का उद्घाटन किया। उसके बाद से मनोविज्ञान को एक विज्ञान माना जाने लगा। कालान्तर में जैसे - जैसे मरीज़ों पर वैज्ञानिक प्रक्रियाओं का प्रयोग किया गया वैसे - वैसे नई - नई समस्याएं सामने आने लगी। व्यवहार विषयक नियमों की खोज ही मनोविज्ञान का मुख्य ध्येय था। अत: सैद्धान्तिक स्तर पर विभिन्न दृष्टिकोण प्रस्तुत किए गए। मनोविज्ञान के क्षेत्र में सन् 1912 ई. के आस - पास संरचनावाद, क्रियावाद, व्यवहारवाद तथा मनोविश्लेषणवाद आदि का विकास हुआ। इन सभी वादों के प्रवर्तक इस विषय से एक मत थे कि मनुष्य के व्यवहार का वैज्ञानिक अध्ययन ही मनोविज्ञान का उद्देश्य है।

1.6 व्यक्तित्व विकास के संदर्भ में मनोविज्ञान की चर्चा :

व्यक्ति को अपने समाज में अनेक सकारात्मक एवं नकारात्मक परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है | जिस प्रकार व्यक्ति इन परिस्थितियों का सामना करता है, उससे उसके व्यक्तित्व के विभिन्न पक्ष उभर कर सामने आते हैं | व्यक्ति का संतुलन व्यक्तित्व के द्वारा होता है | व्यक्तित्व वही है जो व्यक्ति के व्यवहार का स्थायी लक्षण होता है |

मनोविज्ञन ने व्यक्तित्व को समझने के लिए भिन्न - भिन्न मार्ग अपनाये हैं | मनोवैज्ञानिकों ने पर्यावरण एवं जैव - दोनों आधारों के माध्यम से व्यक्तित्व की परिभाषा देने की कोशिश की है | व्यक्तित्व का वर्णन इस प्रकार किया जा सकता है वह – " एक ज्ञानात्मक, भावनात्मक एवं क्रियात्मक मनुष्य है जो अधिकतर अपने आपको एक व्यक्ति समझता है और यह अनुभव करता है कि वह दूसरी वस्तु एवं प्राणियों से भिन्न है, वह तो व्यक्तित्व है |"[7] इस संदर्भ में बोरिंग का मत है कि - "व्यक्तित्व, व्यक्ति का अपना पर्यावरण से प्रतिरूपक अथवा लक्षणिक सामंजस्य है |"[8] अतः व्यक्तित्व के अनुसार व्यक्तियों का वर्गीकरण संभव है | प्रसिद्ध मानोवैज्ञानिक सी.जी.युंग ने संवेग के आधार पर व्यक्तित्व का वर्गीकरण किया है | उनके अनुसार दो प्रकार के व्यक्तित्व हो सकते हैं – अंतर्मुखी और बहिर्मुखी |

अंतर्मुखी : अंतर्मुखी व्यक्तित्व वाले व्यक्ति का चिंतन यथार्थ से हटकर स्वयं पर केन्द्रित होता है | वह अपने ही मन की बनाई दुनिया में मग्न रहता है | बालक किन्हीं कारणों से स्वयं को समाजिकता से काट लेता है, जिसके परिणामस्वरूप उसमें आत्मविशवश की कमी होने लगती है और वह हीनताबोध से ग्रस्त हो जाता है | इस प्रकार का व्यक्ति समाजिकता से कटे होने के कारण दब्बू प्रवृत्ति का हो जाता है, साथ ही उसे अपने विचार व्यक्त करने में संकोच होता है | जगत और जीवन के प्रति वैराग्य भाव, गूढ़, दर्शनिकता, सूक्ष्म विषय पर विचार करना, मित्रों से विमुख रहना आदि इस तरह के व्यक्तियों की विशेषताएँ होती है |

---

[7] डॉ. सुधा ए. एस.,धर्मवीर भारती के कथा साहित्य में मनोवैज्ञानिकता,अभय प्रकाशन,कानपुर,पृष्ठ संख्या 46

[8] डॉ. सुधा ए.एस.,धर्मवीर भारती के कथा साहित्य में मानोवैज्ञानिकत,अभय प्रकाशन, कानपुर,पृष्ठ संख्या 46

बहिर्मुखी : बहिर्मुखी व्यक्तिव का बालक अपने विकास क्रम में सामाजिक मुखरता की ओर उन्मुख होता है | उसमें आत्मविश्वाश की कमी नहीं होती | इस प्रवृत्ति के मनुष्य लोगों से मिलने - जुलने में हिचक महसूस नहीं करते और इनके विचार यथार्थ के क़रीब ठहरते हैं | कम शब्दों में कहा जाए तो, बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाले व्यक्ति अंतर्मुखी व्यक्तित्व वाले व्यक्ति के विपरीत होते हैं |

डॉ.सुधा ए.एस. का कहना है कि "युंग के इस वर्गीकरण में त्रुटियाँ पा सकते है क्योंकि केवल दो श्रेणियों में मनुष्य के व्यक्तित्व को विभाजित किया नहीं जा सकता | इन दो विभागों में मध्यम, तीसरी श्रेणी का होना अनिवार्य है |"[9] क्रिश्चमेयर और शेल्डन माध्यम श्रेणी के व्यक्तित्व को उभयमुखी कहते हैं |

1.7 बाल मनोविज्ञान क्या है :

बाल मनोविज्ञान मनोविज्ञान की वह शाखा है, जिसमें गर्भावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक के मनुष्य के मानसिक विकास का अध्ययन किया जाता है। यह मनोविज्ञान की एकीकृत शाखाएं है | यद्यपि उन्नीसवी शताब्दी में बालकों की उच्च शिक्षा व लालन पालन के लिए संसार ने बाल मनोविज्ञान की आवश्यकता को महसूसा किंतु, इसका उचित विकास बीसवीं शताब्दी में बाल शिक्षण के महत्व के साथ ही हो पाया। बाल मनोविज्ञान को परिभाषित करते हुये Elizebeth b.hurlock ने कहा है - "बाल मनोविज्ञान एक सामान्य शब्द है जिसका प्रयोग बच्चों के व्यवहार और मनोवैज्ञानिक

[9] डॉ. सुधा ए.एस.,धर्मवीर भारती के कथा साहित्य में मानोवैज्ञानिकत,अभय प्रकाशन, कानपुर,पृष्ठ संख्या 47

विकास से संबन्धित वैज्ञानिक अध्ययन के अर्थ में प्रयुक्त होता है |"[10] मानव की बाल्यावस्था की घाटनाओं, एवं अनुभवों को जानने के बाद उसके वयस्क जीवन की चारित्रिक विशेषताओं का अध्ययन करना आसान हो जाता है | इसलिए मनोविज्ञान की एक महत्वपूर्ण एवं स्वतंत्र शाखा के रूप में बाल मनोविज्ञान का विकास हुआ | बाल मनोविज्ञान बचपन के मानसिक विकास का वैज्ञानिक अध्ययन होता है | L.C. Crow and Crow के अनुसार "बाल मनोविज्ञान वह विज्ञान है जिसमें बालक के गर्भकाल से लेकर किशोरावस्था के प्रारम्भ तक के मानसिक विकास का वैज्ञानिक अध्ययन किया जाता है |"[11] फ्रायड के अनुसार बच्चों के व्यक्तित्व विकास की पाँच अवस्थाएँ होती हैं - मुखीय, गुदीय, लिंग प्रधान, अप्रत्यक्षय और जननेन्द्रिय अवस्था |

मुखीय अवस्था बच्चे के स्तनपान की अवस्था को कहा जाता है | इस अवस्था में उसके स्वतंत्र अस्तित्व के विकास के लिए वातावरण आवश्यक है | खाने - पीने की आदतें इसी अवस्था की में होती है | आठ महीने से लेकर चार साल की अवस्था गुड़िया अवस्था है | इस समय बच्चे में सामाजिक बोध पैदा होता है | लिंग प्रधान अवस्था सात वर्ष तक होती है | इस समय लिंग संबंधी, यौन संबंधी और जन्म संबंधी अनेक प्रश्न एवं शंकाएँ जन्म लेती हैं | मानसिक ग्रंथियों का विकास भी इसी अवस्था में होता है | सामाजिक भय के कारण पाँच से बारह वर्ष तक बालक की कामवासनाएँ अप्रत्यक्ष रहती है, इसी अवस्था को फ्रायड ने अप्रत्यक्ष अवस्था कहा है | सामाजिक शिक्षा द्वारा बालक की नैसर्गिक यौन प्रवृत्तियां संयमित एवं नियंत्रित होती है | ये प्रवृत्तियाँ बारह - तेरह साल

---

[10] डॉ.सुधा ए.एस.,धर्मवीर भारती के कथा साहित्य में मनोवैज्ञानिकता,अभय प्रकाशन,कानपुर,पृष्ठ संख्या 47

[11] Child psychology is a scientific study of the individual from his prenatal beginning's through the early stage pf his adolesecent development, L.C.Crow and Crow,child psychology,पृष्ठ संख्या 1

की उम्र से पुनः जागृत होने लगती है, इस अवस्था को जननेन्द्रिय अवस्था कहा जाता है | (जननेन्द्रिय का) वे प्राकृतिक धर्म और प्रजनन प्रक्रिया के संबंध में अपने परिवेश से अधिक जानकारी प्राप्त करते हैं | फ्रायड के अनुसार यौनावस्था में पहुँचने से पहले बच्चों में कामभावनाएँ विध्यमान रहती है |

बाल मनोविज्ञान के संदर्भ में अनेक विद्धवानों नें समय - समय पर अपने मत प्रकट किए | हरबर्ट स्पेंसर ने प्रत्येक नागरिक की शिक्षा में बाल मनोविज्ञान की शिक्षा को अनिवार्य बताया हुये उसकी व्याख्या की | अठारहवीं शताब्दी में 'रूसो' ने भी बालक की योग्य शिक्षा हेतु बाल मनोविज्ञान को आवश्यक बताया और अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर 'emile' नामक पुस्तक लिखी। मनोविज्ञान के तहत रूसो ने बच्चे के जन्म से उसके मृत्यु तक के अवधि को लिया है | रूसो ने लीक से हटकर बाल मनोविज्ञान का अध्ययन किया | उन्होने शिशु के जन्म के पश्चात उसकी पहली चीख़ को भी मनोवैज्ञानिक विश्लेषण के तहत चिन्हित किया | उनका माना था कि हमारा समाज शिशु के जन्मते ही उस पर नाना प्रकार की बाधाएँ आरोपित कर देता है, जिसके कारण नवजात बच्चे रोने लगते हैं | बच्चा जन्म लेने के बाद हाथ-पैर चलाने के लिए भी आज़ाद नहीं होता, वह अपने बड़ो के हिसाब से अपने शरीर को हिलाता-डुलता है ; जन्म लेने साथ ही शिशु के सर को ढक दिया जाता है, शिशु का सर ढकना इस बात का द्योतक है कि हमारा समाज उसे स्वतंत्र रूप से विकसित नहीं होने देता, बल्कि उसपर नाना प्रकार की बाधाएँ आरोपित करता है | रूसो इस आरोपित बाधा के विरुद्ध थे | अतः अपनी किताब ('emile') में रूसो इस संदर्भ में कहते हैं कि " The new-born child needs to stretch and to move his limbs so as to draw them out of the

torpor in which,rolled into a ball, they have so long remaind. We do stretch his limbs,it is true, but we prevent him from moving them. We even constrain his head into a baby's cap…Their first feeling is a feeling of constraint and of suffering. To all their necessary movments they find only obstacles. More unfortunate than chained criminals, they make fruitless efforts, they fret themselves, they cry. Do you tell me that the first sounds they make are cries ? I can well believe it ; you thwart them from the time they are born. The first gifts they receive from you are chains, the first treatment they undergo is tourment. Having nothing free but the voice, why should they not use it in complaints ?"[12]

रूसो ने बालक के विकासक्रम में रूसो ने उनकी शिक्षा पद्धति पर भी विचार व्यक्त किए | उनकी शिक्षा का दर्शन प्रकृतिवादी था | वह परंपरागत औपचारिक शिक्षा-व्यवस्था के विरुद्ध थे | रूसो ने बच्चों के विकासक्रम में तार्किक क्षमता के विकास पर बल दिया | उनका मानना था कि ज्ञानेन्द्रियों के प्रशिक्षण और शारीरिक शिक्षा से स्वतंत्र तार्किक और निर्णय क्षमता के विकास की शुरुवात होती है | रूसो शिक्षण विधि में 'खुद से सीखने' के समर्थक थे | वर्तमान शिक्षा व्यवस्था पर विचार किया जाए तो, कहीं न कहीं इस पर रूसो के विचारों का असर दिख पड़ता है |

---

[12] Emile ; or concerning education,Jean Jacques russeau,Boston : D.C. health & company 1886,पृष्ठ संख्या 15-16

बालकों के शारीरिक एवं मानसिक विकास का वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन पिछले 80 वर्षों से ही हो रहा है । मनोविज्ञान का प्रारंभिक अध्ययन फ़्रान्स में हुआ । फ़्रांसीसी लेखक भी पीकाट ने 'थॉट एंड लैंगुएज ऑफ़ दि चाइल्ड' नामक पुस्तक लिखकर बाल मनोविज्ञान के क्षेत्र में नवीनतम परिवर्तन लाया। इसी समय 'डॉक्टर विने' ने मन्द बुद्धि बालकों की परख के लिए बुद्धि मापाक परीक्षाएं निकाली । क्रमश: बुद्धि मापक परीक्षाओं का विकास विश्व के अनेक देशों में हुआ और आज विश्व के सभी देश प्राय: अपने अनुकूल इसका प्रयोग कर रहे हैं। जर्मनी के विद्वानों ने बालक के सीखने की प्रक्रियाओं पर अनेक प्रयोग किये और सीखने की प्रक्रिया के गूढ़ रहस्यों को समझने के लिए मौलिक सिद्धांतों का अन्वेषण किया। वहीं यूरोप के अधिकतर विद्वानों के खोज का प्रयोग इंग्लैंड की शिक्षा व्यवस्था में किया गया है। यहाँ यह जानने की चेष्टा की गयी है कि बालक के भिन्न - भिन्न योग्यताओं में क्या आपसी संबंध है ? इस क्षेत्र में 'टॉमसन' और 'सियर मैन' के प्रयोग अत्यंत महत्वपूर्ण है | इसके अलावा औसत बुद्धि के बालकों के विषय में जानकारी एकत्रित की गई और उनकी उचित शिक्षा तथा सुधार के लिए महत्वपूर्ण सिद्धांत निर्धारित किये गए । 'डॉक्टर सिल्डवर्ट' ने अपराधी मनोवृति के बालकों पर महत्वपूर्ण शोध किया वहीं 'डॉक्टर होमर लेन' के अपराधी बालकों के सुधार संबंधी प्रयोग भी महत्वपूर्ण है। बाल मनोविज्ञान संबंधी व्यापक कार्य अमेरिकी विद्वानों ने किया। दूसरे देशों ने जो काम सीमित धरातल पर किये वही काम अमेरिका में संगठित और विस्तृत ढंग से हुआ। 'डॉक्टर स्टेनले हाल' ने किशोर बालकों का जैसा अध्ययन किया है, वैसा विश्व में कहीं नहीं हुआ। उनकी 'एडोलेसेंस' नामक पुस्तक बाल

मनोविज्ञान के क्षेत्र में महत्वपूर्ण उपलब्धि है | वर्तमान में 'गुडएनफ़ मैकार्थो' आदि विद्वान बच्चों के क्रिया - कलापों पर अध्ययनरत है।

1.7.1 बाल विकास की अवस्थायें :

बाल विकास की प्रक्रिया भ्रूणावस्था से जीवन पर्यंत चलती है फिर भी मनोवैज्ञानिकों ने बाल विकास की अवस्थाओं को विभाजित करने का प्रयत्न किया है, जो इस प्रकार है -

(अ) रोस के अनुसार :

(1) शैशवकाल : 1 से 3 वर्ष तक |

(2) पूर्व-बाल्यावस्था : 3 से 6 वर्ष तक |

(3) उत्तर- बाल्यावस्था : 6 से 12 वर्ष तक |

(4) किशोरावस्था : 12 से 18 वर्ष तक |

(ब) जोन्स के अनुसार :

(1) शैशवावस्था : जन्म से 5 वर्ष की आयु तक |

(2) बाल्यावस्था : 5 वर्ष से 12 वर्ष की आयु तक |

(3) किशोरावस्था : 12 वर्ष से 18 वर्ष की आयु तक |

(स) हरलोक के अनुसार :

(1) गर्भावस्था : गर्भधारण से जन्म तक |

(2) नवजात अवस्था : जन्म से 14 दिन तक |

(3) शैशवावस्था : 14 दिन से 2 वर्ष की आयु तक |

(4) बाल्यावस्था : 2 वर्ष से 11 वर्ष की आयु तक |

(5) किशोरावस्था : 11 वर्ष से 21 वर्ष की आयु तक |

(द) सामान्य वर्गीकरण : अब अधिकाँश विद्वान सामान्य वर्गीक रण को हो मानते है जो इस प्रकार है -

(1) शैशवावस्था : जन्म से 6 वर्ष की आयु तक |

(2) बाल्यावस्था : 6 वर्ष से 12 वर्ष की आयु तक |

(3) किशोरावस्था : 12 वर्ष से 18 वर्ष की आयु तक |

विकास की अवस्थाएं : मानव विकास विभिन्न अवस्थाओं से होकर गुजरता है, इन्हें निम्न अवस्थाओं में विभाजित किया जा सकता है -

गर्भावस्था : यह अवस्था गर्भाधारण से जन्म के समय तक, 9 महिना या 280 दिन तक मानी जाती है |

शैशवावस्था : बालक के जन्म लेने के पश्चात की अवस्था को शैशवावस्था कहते हैं | यह अवस्था 5 से 6 वर्ष की आयु तक मानी जाती है | इस अवस्था का प्रसार क्षेत्र जन्म से दो वर्ष तक होता है | बालक की शारीरिक प्रतिक्रिया जैसे भूख लगना, अधिक गर्मी से अकुलाहट का होना, अधिक ठण्ड से कांपना, दर्द की अनुभूति करना तथा चमक व

कोलाहल के प्रति बालक में घृणा का भाव उत्पन्न होना | दो माह की अवस्था में बालक वस्तुओं पर ध्यान केन्द्रित करने लगता है, चार माह में वस्तुओं को पकड़ने व संवेगों की स्पष्ट अभिव्यक्ति करने लगता है | जन्म से पांचवे वर्ष तक की अवस्था को शैशवावस्था कहा जाता है, इस अवस्था को समायोजन की अवस्था भी कहते हैं | ये वह अवस्था होती है जब शिशु असहाय स्थितियों में अनेक मूल प्रवृतियों, आवश्यकतओं एवं शक्तियों को लेकर इस संसार में आता है, और वह दूसरों पर निर्भर होता है।

शैशवावस्था की विशेषता :

1. शिशु शारीरिक एवं मानसिक रूप से अपरिपक्व होता है |

2. इस अवस्था में विकास की गति तीव्र होती है।

3. शरीर के समस्त अंगों की रचना और आकृतियों का निर्माण होता है।

4. इस अवस्था में होने वाले परिवर्तन मुख्यतः शारीरिक होते हैं।

5. इस अवस्था में बालक अपरिपक्व होता है तथा वह पूर्णत: दूसरों पर निर्भर रहता है।

6. यह अवस्था संवेग प्रधान होती है तथा बालकों के भीतर लगभग सभी प्रमुख संवेग जैसे- प्रसन्नता, क्रोध, हर्ष, प्रेम, घृणा, आदि विकसित हो जाते हैं |

7. फ्रायड ने इस अवस्था को बालक का निर्माण काल कहा है। उनका मानना था कि 'मनुष्य को जो भी बनना होता है, वह प्रारंभिक पांच वर्षों में ही बन जाता है।

शैशवावस्था मूल रूप से शारीरिक, मानसिक एवं संवेदनात्मक विकास की आरंभिक अवस्था होती है | बीसवीं सदी में बाल जीवन के प्रारम्भिक अवस्था से संबन्धित अनेक शोध हुये | अतः क्रो एवं क्रो ने " बीसवी सदी को 'बालक की शताब्दी' कहा है। एडलर ने लिखा है " बालक के जन्म के कुछ माह बाद ही यह निश्चित किया जा सकता है कि जीवन में उसका क्या स्थान है।"[13] स्ट्रेंग के अनुसार "जीवन के प्रथम दो वर्षो में बालक अपने भावी जीवन का शिलान्यास करता है।"[14]

बाल्यावस्था : शैशवास्था के बाद बाल्यावस्था आता है। छः से बारह वर्ष की अवधि को बाल्यावस्था कहा जाता है। इसे पूर्व किशोरावस्था भी कहा जाता है। इसे मानव जीवन का स्वर्णिम समय कहा गया है। फ्रायड का मानना है कि बलाक का विकास पाँच वर्ष की आयु तक हो जाता है। ब्येयर, जोन्स एवं सिम्पसन ने लिखा है "बाल्यावस्था एक ऐसी अवस्था है जिसमें की व्यक्ति का आधारभूत द्रष्टिकोण, मूल्य एवं आदर्शों का बहुत सीमा तक निर्माण हो जाता है।"[15] कोल एवं बस ने बाल्यावस्था को जीवन का अनोखा काल कहा है। यह अवस्था शारीरिक और मानसिक विकास की दृष्टी से महत्वपूर्ण होती है।

बाल्यावस्था की विशेषताएं :

1. बच्चे बहुत ही जिज्ञासु प्रवृति के हो जाते हैं, उनमें जानने की प्रबल इच्छा होती है।

---

[13] https://pshivane.blogspot.com/2016/08/1-3-2-6-3-12-4-18-1-5-2-12-3-1-2-18-1-2.html?m=1

[14] https://pshivane.blogspot.com/2016/08/1-3-2-6-3-12-4-18-1-5-2-12-3-1-2-18-1-2.html?m=1

[15] https://pshivane.blogspot.com/2016/08/1-3-2-6-3-12-4-18-1-5-2-12-3-1-2-18-1-2.html?m=1

2. बच्चों में प्रश्न पूछने की प्रवृति विकसित होती है।

3. सामाजिकता का अधिकतम विकास होता है|

4. इस अवस्था में बच्चों में मित्र बनाने की प्रबल इच्छा होती है।

5. बालकों में 'समूह प्रवृति' (Gregariousness) का विकास होता है।

6. शिक्षाशास्त्रियों ने इस अवस्था को 'प्रारम्भिक विद्यालय की आयु' की संज्ञा दी है। जबकि मनोवैज्ञानिकों ने इस काल को 'समूह की आयु ' कहा है।

7. इस काल को गन्दी आयु एवं चुस्ती की आयु, मिथ्या परिपक्वता की संज्ञा भी दी गई है।

8. इस काल में शारीरिक एवं मानसिक विकास में स्थिरता होती है|

9. भ्रमण की प्रवृति, रचनात्मक कार्यों में रूचि, अनुकरण की प्रवृति, मानसिक योग्यताओं में वृद्धि, संचय की प्रवृति, आत्मनिर्भरता, सामूहिक प्रवृति की प्रबलता, बहिर्मुखी व्यक्तित्व, सामूहिक खेलों में विशेष रूचि, सुप्त काम वृत्ति, पुनःस्मरण, यथार्थ जगत से सम्बन्ध आदि इस काल की विशेषताएँ हैं।

बाल्यावस्था में संवेगात्मक विकास : बाल्यावस्था में संवेगात्मक विकास का आधार मूल प्रवृत्तियाँ है। इस अवस्था में संवेगों की स्थिति इस प्रकार होती है - संवेगों का निर्बल होना, भय, हताशा, क्रोध, इर्ष्या, जिज्ञासा, स्नेह, प्रफुल्लता इत्यादि।

संवेगों को प्रभावित होने वाले कारक : बालक का स्वास्थ्य, थकान, बुद्धि, मानसिक योग्यता, परिवार, माता - पिता का दृष्टिकोण, सामाजार्थिक स्थिति, विद्यालय, एवं शिक्षक बालक के संवेगों को सकारात्मक एवं नकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं।

1.7.2 बाल विकास के सिद्धान्त :

बाल मनोवैज्ञानिकों ने बालक के व्यक्तित्व विकास संबंधी कई सिद्धांत दिए, जो निम्नलिखित है -

लारेन्स कोलबर्ग (1927 – 1987) : लारेन्स कोलबर्ग ने नैतिक विकास के छः चरण बताए, जिन्हें आसानी से पहचाना जा सकता है। इन छः चरणों में से प्रत्येक चरण नैतिक दुविधाओं को सुलझाने में अपने पूर्व चरण से अधिक परिपूर्ण है । प्याज़े की तरह कोलबर्ग ने भी पाया कि नैतिक विकास कुछ चरणों में होता है। कोलबर्ग ने पाया कि ये चरण सार्वभौमिक होते हैं । बच्चों के साथ बीस साल तक एक विशेष प्रकार के साक्षात्कार का प्रयोग करने के बाद कोलबर्ग इन निर्णयों पर पहुंचे। साक्षात्कार में दिए गए उत्तरों के आधार पर कोलबर्ग ने नैतिक चिंतन की तीन अवस्थाएं बताई हैं, जिन्हें पुनः दो - दो चरणों में विभाजित किया है | यह नैतिक चिन्तन का सबसे निचला चरण है। इस चरण में क्या सही और क्या गलत, इस पर बाहर से मिलने वाली सजा और उपहार का प्रभाव पड़ता है | कोलबर्ग द्वारा बताए गए नैतिक विकास के चरण निम्नलिखित है -

चरण 1 : बाहरी सत्ता पर आधारित : नैतिकता इस रूढ़ि पूर्व अवस्था का पहला चरण है। यहां नैतिक सोच, सजा से बंधी होती है। जैसे कि बच्चे यह मानते हैं कि उन्हें बड़ों की बातें माननी चाहिए नहीं तो बड़े उन्हें दण्डित करेंगे । एक - दूसरे का हित साधने पर

आधारित नैतिक चिंतन, रूढ़ि पूर्व अवस्था का दूसरा चरण है। यहां बच्चा सोचता है कि अपने हितों के अनुसार कार्य करने में कुछ गलत नहीं है, पर हमें साथ में दूसरों को भी उनके हितों के अनुरूप काम करने का मौका देना चाहिए। अतः इस स्तर की नैतिक सोच यह कहती है कि वही बात सही है जिसमें बराबरी का लेन - देन हो रहा हो। यदि हम दूसरे की कोई इच्छा पूरी कर दें तो वह भी हमारी इच्छा पूरी करेगा।

चरण 2 : रूढ़िगत चिंतन : कोलबर्ग के नैतिक विकास के सिद्धांत की दूसरी अवस्था है। इस अवस्था में लोग एक पूर्व आधारित सोच से चीजों को देखते हैं। जैसे देखा गया है कि अक्सर बच्चों का व्यवहार उनके मां-बाप या किसी बड़े व्यक्ति द्वारा बनाए गए नियमों पर आधारित होता है।

चरण 3 : अच्छे आपसी व्यवहार व सम्बन्धों पर आधारित नैतिक चिन्तन : यह कोलबर्ग के नैतिक विकास के सिद्धांत की तीसरी अवस्था है। इस स्थिति में लोग विश्वास, दूसरों का ख्याल रखना, दूसरों के निष्पक्ष व्यवहार को अपने नैतिक व्यवहार का आधार मानते हैं। बच्चे और युवा अपने माता - पिता द्वारा निर्धारित किये गए नैतिक व्यवहार के मापदण्डों को अपनाते हैं, जो उन्हें उनके माता - पिता की नजर में एक 'अच्छा लड़का या अच्छी लड़की' बनाते हैं।

चरण 4 : सामाजिक व्यवस्था बनाए रखने पर आधारित नैतिक चिन्तन : यह कोलबर्ग के सिद्धांतों की चौथी अवस्था है। इस स्थिति में लोगों के नैतिक विकास की अवस्था सामाजिक आदेश, कानून, न्याय और कर्त्तव्यों पर आधारित होती है | जैसे किशोर

सोचते हैं कि समाज अच्छे से चले इसके लिए कानून के द्वारा बनाए गए दायरे के अन्दर ही रहना चाहिए।

चरण 5 : सामाजिक अनुबन्ध, उपयोगिता और व्यक्तिगत अधिकारों पर आधारित नैतिक चिन्तन : यह कोलबर्ग के सिद्धांत की पांचवी अवस्था है। इस अवस्था में व्यक्ति यह सोचने लगता है कि कुछ मूल्य, सिद्धांत और अधिकार कानून से भी ऊपर हो सकते हैं। व्यक्ति वास्तविक सामाजिक व्यवस्थाओं का मूल्यांकन इस दृष्टि से करने लगता है कि वे किस हद तक मूल अधिकारों व मूल्यों का संरक्षण करते है।

चरण 6 : **सार्वभौमिक नीति सम्मत सिद्धांतों पर आधारित नैतिक चिन्तन** : यह कोलबर्ग के नैतिक सिद्धान्त की सबसे ऊंची और छठी अवस्था है । इस अवस्था में व्यक्ति सार्वभौमिक मानवाधिकार पर आधारित नैतिक मापदण्ड बनाता है। जब भी कोई व्यक्ति अंतरात्मा की आवाज के द्वंद के बीच फंसा होता है तो, वह व्यक्ति यह तर्क करता है कि अंतरात्मा की आवाज के साथ चलना चाहिए, चाहे वह निर्णय जोखिम से भरा ही क्यों न हो। इसीलिए वह कुछ भी करने से पहले अपनी भावनाओं के अलावा औरों की जिन्दगी के बारे में भी सोचता है |

कोलबर्ग मानते हैं कि यह अवस्थाएं एक क्रम में चलती है और उम्र से जुड़ी हुए हैं। नौ साल की उम्र से पहले बच्चे पहले स्तर पर काम करते है । अधिकतर किशोर तीसरी अवस्था में सोचते पाए जाते हैं पर उनमें दूसरी अवस्था और चौथी अवस्था के सोच-विचार के कुछ लक्षण भी दिखाई दे सकते हैं। प्रारंभिक व्यवस्था में पहुँचने पर कुछ थोड़े से लोग ही रूढ़िपूर्णता से ऊपर उठकर नैतिक तर्क देते है। लेकिन वे कौन से सबूत हैं जो

इस तरीके के विकास को प्रमाणित करते हैं ? बीस साल के लम्बे अध्ययन के परिणाम के अनुसार उम्र के साथ अवस्था एक और दो का उपयोग घटा है और अवस्था चार जो, दस साल की उम्र के बच्चों के नैतिक तर्क में बिल्कुल भी नहीं आती, वह 36 साल की उम्र के 62 प्रतिशत लोगों की नैतिक सोच में दिखाई देती है। पांचवी अवस्था 20 से 22 साल की उम्र तक बिल्कुल भी नहीं आती और वह कभी भी 10 प्रतिशत से ज्यादा में नहीं दिखाई देती है। इसीलिए नैतिक अवस्थाएं जैसा कि कोलबर्ग ने शुरूआत में सोचा था, उससे थोड़ी देर में आती है और छठी अवस्था में चिन्तन करना तो बहुत ऊंची अवस्थाओं में आता है, जो कि बहुत विलक्षण है। हालांकि अवस्था छः कोहलबर्ग की नैतिक निर्णायक अंक प्रणाली से हटा दी गई है, लेकिन यह अभी भी सैद्धांतिक रूप से कोलबर्ग के नैतिक विकास की है।

ज्याँ प्याजे : प्याज़े द्वारा प्रतिपादित संज्ञानात्मक विकास सिद्धान्त (theory of cognitive development) मानव बुद्धि की प्रकृति एवं उसके विकास से सम्बन्धित एक विशाल सिद्धान्त है। प्याज़े का मानना था कि व्यक्ति के विकास में उसका बचपन एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है | प्याज़े का सिद्धान्त, विकास की अवस्था सिद्धान्त (developmental stage theory) कहलाता है। यह सिद्धान्त ज्ञान की प्रकृति के बारे में है और बतलाता है कि मानव कैसे क्रमशः इसका अर्जन करता है ; कैसे इसे एक - एक कर जोड़ता है और कैसे इसका उपयोग करता है। व्यक्ति वातावरण के तत्वों का प्रत्यक्षीकरण करता है अर्थात् पहचानता है | प्रतीकों की सहायता से उन्हें समझने की कोशिश करता है तथा संबंधित वस्तु/व्यक्ति के संदर्भ में अमूर्त चिन्तन करता है। उक्त सभी प्रक्रियाओं से मिलकर उसके भीतर एक ज्ञान भण्डार या संज्ञानात्मक संरचना उसके

व्यवहार को निर्देशित करती है । इस प्रकार हम कह सकते हैं कि कोई भी व्यक्ति वातावरण में उपस्थित किसी भी प्रकार के उद्दीपकों (स्टिमुलैंट्स) से प्रभावित होकर सीधे प्रतिक्रिया नहीं करता है, पहले वह उन उद्दीपकों को पहचानता है, ग्रहण करता है, उसकी व्याख्या करता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि संज्ञानात्मक संरचना वातावरण में उपस्थित उद्दीपकों और व्यवहार के बीच मध्यस्थता का कार्य करता है।

ज्याँ प्याजे ने व्यापक स्तर पर संज्ञानात्मक विकास का अध्ययन किया । प्याजे के अनुसार, बालक द्वारा अर्जित ज्ञान के भण्डार का स्वरूप विकास की प्रत्येक अवस्था में बदलता है और परिमार्जित होता रहता है । प्याजे के संज्ञानात्मक सिद्धान्त को विकासात्मक सिद्धान्त भी कहा जाता है। चूंकि उसके अनुसार, बालक के भीतर संज्ञान का विकास अनेक अवस्थओं से होकर गुजरता है, इसलिए इसे अवस्था सिद्धान्त भी कहा जाता है।

ऐरिक्सन : ऐरिक्सन के सिद्धान्त के अनुसार पूरा जीवन विकास के आठ चरणों से होकर गुज़रता है। प्रत्येक चरण में एक विशिष्ट विकासात्मक मानक होता है, जिसे पूरा करने में आने वाली समस्याओं का समाधान करना आवश्यक होता है। ऐरिक्सन के अनुसार समस्या कोई संकट नहीं होती, बल्कि संवेदनशीलता और सामर्थ्य को बढ़ाने वाली महत्वपूर्ण बिन्दु होती है। समस्या का व्यक्ति जितनी सफलता से समाधान करता है उसका उतना ही अधिक विकास होता है | एरिक्सन के अनुसार जीवन विकास के आठ चरण निम्न लिखित हैं -

1. **विश्वास बनाम अविश्वास :** यह ऐरिक्सन का पहला मनोसामाजिक चरण है जिसका जीवन के पहले वर्ष में अनुभव किया जाता है। विश्वास के अनुभव के लिए शारीरिक आराम, कम से कम डर, भविष्य के प्रति कम से कम चिन्ता जैसी स्थितियों की आवश्यकता होती है। बचपन में विश्वास के अनुभव से संसार के बारे में अच्छे और सकारात्मक विचार जैसे संसार रहने के लिए एक अच्छी जगह है, आदि उम्र भर के लिए विकसित हो जाते है।

2. **स्वायत्ता बनाम शर्म :** ऐरिक्सन के द्वितीय विकासात्मक चरण में यह स्थिति शैशवावस्था के उत्तरार्ध और बाल्यावस्था (1 से 3 वर्ष) के बीच होती है। अपने पालक के प्रति विश्वास होने के बाद बालक यह आविष्कार करता है कि बालक का व्यवहार उसका स्वयं का है, वह अपने आप में स्वतंत्र और स्वायत्त है। उसे अपनी इच्छा का अनुभव होता है। अगर बालक पर अधिक बंधन लगाया जाए या कठोर दंड दिया जाए तो उनके अंदर शर्म और संदेह की भावना विकसित होने की संभावना बढ़ जाती है।

3. **पहल बनाम अपराध बोध :** ऐरिक्सन के विकास का तीसरा चरण पाठशाला जाने के प्रारंभिक वर्ष के बीच होता है। इस समय एक बालक को प्रारंभिक शैशव अवस्था की तुलना में और अधिक चुनौतियां झेलनी पड़ती हैं। इन चुनौतियों का सामना करने के लिए एक सक्रिय और प्रयोजन पूर्ण व्यवहार की आवश्यकता होती है। इस उम्र में बच्चों को उनके शरीर, उनके व्यवहार, उनके खिलौने और पालतू पशुओं के बारे में ध्यान देने को कहा जाता है। अगर बालक गैर जिम्मेदार है और उसे बार - बार व्यग्र किया जाए तो उनके अंदर असहज अपराध बोध की भावना उत्पन्न हो सकती है। ऐरिक्सन का इस

चरण के प्रति एक सकारात्मक दृष्टिकोण है | उनका यह मानना है कि अधिकांश अपराध बोध की भावनाओं के प्रति तुरंत पूर्ति ही उपलब्धि की भावना द्वारा की जा सकती है।

4. **परिश्रम/उद्यम बनाम हीन भावना :** यह ऐरिक्सन का चौथा विकासात्मक चरण है, जो कि बाल्यावस्था के मध्य में (प्रारंभिक वर्षों में) परिलक्षित होता है। बालक द्वारा की गई पहल से वह नए अनुभवों के संपर्क में आता है और जैसे - जैसे वह बचपन के मध्य और अंत तक पहुंचता है, तब तक वह अपनी ऊर्जा को बौद्धिक कौशल और ज्ञान से हासिल करने की दिशा में मोड़ देता है। बाल्यावस्था का अंतिम चरण कल्पनाशीलता से भरा होता है, यह समय बालक के सीखने के प्रति जिज्ञासा का सबसे अच्छा समय होता है। इस आयु में बालक के अन्दर हीन भावना (अपने आपको अयोग्य और असमर्थ समझने की भावना) विकसित होने की संभावना रहती है।

5. **पहचान बनाम पहचान भ्रान्ति :** यह ऐरिक्सन का पांचवा विकासात्मक चरण है, जिसका अनुभव किशोरावस्था के वर्षों में होता है। इस समय व्यक्ति को इन प्रश्नों का सामना करना पड़ता है कि वो कौन है ? किससे संबंधित है ? और उनका जीवन कहां जा रहा है ? किशोरों को बहुत सारी नई भूमिकाएं और वयस्क स्थितियों का सामना करना पड़ता है जैसे - व्यवसायिक और रोमांटिक। उदाहरण के लिए अभिभावकों को किशोरों की उन विभिन्न भूमिकाओं और एक ही भूमिका के विभिन्न भागों का पता लग सकता है, जिनका वह जीवन में पालन कर सकता है। यदि इसके सकारात्मक रास्ते पता लगाने का मौका न मिले तब, पहचान भ्रान्ति की स्थिति हो जाती है।

6. **आत्मीयता बनाम अलगाव :** यह ऐरिक्सन का छटवां चरण है। जिसका अनुभव युवावस्था के प्रारंभिक वर्षो में होता है। यह व्यक्ति के पास दूसरों से आत्मीय संबंध स्थापित करने का विकासात्मक मानक है। ऐरिक्सन ने आत्मीयता को परिभाषित करते हुए कहा है कि आत्मीयता का अर्थ है, 'स्वयं को खोजना', जिसमें स्वयं को किसी और व्यक्ति में खोजना पड़ता है | व्यक्ति की किसी के साथ स्वस्थ मित्रता विकसित हो जाती है और एक आत्मीय संबंध बन जाता है, तब उसके अंदर आत्मीयता की भावना आ जाती है। यदि ऐसा नहीं होता है तो अलगाव की भावना उत्पन्न हो जाती है।

7. **उत्पादकता बनाम स्थिरता :** यह ऐरिक्सन का सातवां चरण है, जो मध्य वयस्क अवस्था में अनुभव होता है। उस चरण का मुख्य उद्देश्य नई पीढ़ी के विकास में सहायता से संबंधित होता है। ऐरिक्सन का उत्पादकता से यही अर्थ है कि नई पीढ़ी के लिए कुछ नहीं कर पाने की भावना से स्थिरता की भावना उत्पन्न होती है।

8. **संपूर्णता बनाम निराशा :** यह ऐरिक्सन का आठवां और अंतिम चरण है, जिसका अनुभव वृद्धावस्था में होता है। इस चरण में व्यक्ति अपने अतीत को टुकड़ों में एक साथ याद करता है और एक सकारात्मक निष्कर्ष निकालता है या फिर बीते हुए जीवन के बारे में असंतुष्टि भरी सोच बना लेता है। अलग - अलग प्रकार के वृद्ध लोगों की अपने बीते हुए जीवन के विभिन्न चरणों के बारे में एक सकारात्मक सोच विकसित होती है। अगर ऐसा होता है तो बीते जीवन का एक अच्छा चित्र (खाका) बन जाता है और व्यक्ति को भी एक तरह के संतोष का अनुभव होता है। संपूर्णता की भावना का अनुभव होता है।

अगर बीते हुए जीवन के बारे में सकारात्मक विचार नहीं बन पाते हैं, तो उदासी की भावना घर कर जाती है। इसे ऐरिक्सन ने निराशा का नाम दिया है।

ऐरिक्सन का यह मानना है कि विभिन्न चरणों में आने वाली समस्याओं का उचित समाधान हमेशा सकारात्मक नहीं हो सकता है। कभी - कभी समस्या के नकारात्मक पक्षों से परिचय भी अपरिहार्य (जरूरी) हो जाता है। उदाहरण के लिए, आप जीवन की हर स्थिति में सभी लोगों पर एक जैसा विश्वास नहीं कर सकते, फिर भी चरण में आने वाले विकासात्मक मानक की समस्या के सकारात्मक समाधान से उसके बारे में सकारात्मक प्रतिबद्धता प्रभावित होती है।

1.7.3 अपराध का मनोविज्ञान :

मनोविज्ञान अपराध को मनुष्य की मानसिक उलझनों का परिणाम मानता है। जिस व्यक्ति में ग्रंथियाँ बन जाती हैं, उसके मन की बहुत सी मानसिक शक्ति इन ग्रंथियों में संचित रहती है। अलफ्रेड एडलर का कथन है कि जिस व्यक्ति के मन में हीनता की ग्रंथियाँ रहती हैं वह अनिवार्य रूप से अनेक प्रकार के अपराध करता है। यह अपराध वह इसलिए करता है कि स्वयं को वह दूसरे लोगों से अधिक बलवान सिद्ध कर सके। हीनता की ग्रंथि जिस व्यक्ति के मन में रहती है वह सदा भीतरी मानसिक असंतोष की स्थिति में रहता है। वह सदैव ऐसे कामों में अपने को लगाए रहता है, जिससे सभी लोग उसकी ओर देखें और उसकी प्रशंसा करे। हीनता की मानसिक ग्रंथि मनुष्य को ऐसे कामों में लगाती है जिसके करने से मनुष्य को अनेक प्रकार की निंदा सुननी पड़ती है। ऐसा व्यक्ति स्वयं को सदा चर्चा का विषय बनाए रखना चाहता है। यदि उसके भले कामों के लिए

चर्चा नहीं हुई तो, बुरे कामों के लिए ही हो। उसकी मानसिक ग्रंथि उसके मन को शांत नहीं रहने देती | वह उसे सदा विशेष काम करने के लिए प्रेरणा देती रहती है। यदि ऐसे व्यक्ति को दंडित किया जाए तो इससे उसका सुधार नहीं होता, अपितु इससे उसकी मानसिक ग्रंथि और भी जटिल हो जाती है। ऐसे अपराधी के उपचार के लिए मानसिक चिकित्सक की आवश्यकता होती है।

मनोविज्ञान ने हमें बताया है कि समाज में अपराध को कम करने के लिए दंडविधान को कड़ा करना पर्याप्त नहीं है। इसके लिए समाज में सुशिक्षा की आवश्यकता होती है। जब मनुष्य की कोई प्रवृति बचपन से ही प्रबल हो जाती है तो, आगे चलकर वह विशेष प्रकार के कार्यो में प्रकाशित होती है । ये कार्य समाज के लिए हितकर होते हैं या फिर समाजविरोधी होते है। अतः हमें ऐसे व्यक्ति के प्रति उचित दृष्टिकोण रखना होगा। जिस बालक को बड़े लाड़ - प्यार से रखा जाता है और उसे सभी प्रकार के कामों को करने के लिए छूट दे दी जाती है, उसमें दूसरों के सुख के लिए अपने सुख को त्यागने की क्षमता ही नहीं आती । ऐसे व्यक्ति की सामाजिक भावनाएँ अविकसित रह जाती है । इसके कारण वह न तो समाजिक दृष्टि से भले - बुरे का विचार कर सकता है और न बुरे कामों से स्वयं को रोकने की क्षमता प्राप्त कर पाता है। बालक के माता - पिता और आस - पास का वातावारण तथा पाठशालाएँ इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उचित शिक्षा का एक उद्देश्य यही है कि बालक में अपने ऊपर संयम की क्षमता आ जाए। जिस व्यक्ति में आत्मनियंत्रण की स्थिति जितनी अधिक रहती है, वह अपराध उतना ही कम करता है
।

समाज में बहुत से लोग अपने विवेक से प्रतिकूल अपराध करते हैं। इसका कारण क्या है ? आधुनिक मनोविज्ञान की खोजों के अनुसार ऐसे लोगों का बाल्यकाल ठीक से व्यतीत नहीं हुआ होता है। ये लोग बुद्धि में तो जन्म से ही प्रवीण थे अतएव ये अनेक प्रकार के विचारों को जान सके परंतु उनके मन में बचपन में ही ऐसे स्थायी भाव नहीं बने जिससे वे स्वयं को अनुचित कार्य करने से रोक सकें। ये स्थायी भाव जब तक मनुष्य के स्वभाव के अंग नहीं बन जाते तब तक वे मनुष्य को दुराचार से रोकने की क्षमता नहीं देते। ऐसे विद्वान लोग अपराध करते हैं और उनके लिए स्वयं को कोसते भी हैं। इससे वे अपनी मानसिक उलझनें बढ़ा लेते हैं। कभी - कभी वे अपने अनुचित कार्यों की नैतिकता सिद्ध करने में अपनी विद्वता का उपयोग कर डालते हैं। इनका सुधार सामान्य दंडविधान से नहीं हो पाता। वे इनसे बचने के अनेक उपाय रच लेते हैं। ऐसे लोगों को सुधारने के लिए आवश्यक है कि शिक्षा का ध्येय आजीविका कमाना अथवा व्यवहार कुशलता प्राप्त कर लेना न होकर मानव व्यक्तित्व का संपूर्ण विकास अर्थात् बौद्धिक और भावात्मक विकास हो। जब मनुष्य दूसरों के हित में अपना हित देखने लगता है और इस सोच के अनुसार आचरण करने की क्षमता प्राप्त कर लेता है तभी वह समाज का सुयोग्य नागरिक होता है। ऐसा व्यक्ति जब कुछ करता है, वह समाज के हित के लिए होता है।

अपराध एक प्रकार की सामाजिक विषमता है, जो व्यक्तिगत मानसिक विषमता का परिणाम है। इस प्रकार की विषमता का प्रारंभ बाल्यकाल में ही हो जाता है। इसके सुधार के लिए प्रारंभ में आदत डालनी पड़ती है कि वह दूसरों के सुख में निज सुख का अनुभव करे | वह ऐसे काम करे जिससे सभी का हित हो और सब उसकी प्रशंसा करें।

1.7.3.1 बाल जीवन के समक्ष चुनौतियां :

आज की नन्ही पीढ़ी ही भविष्य की नियामक शक्ति के रूप में उभरकर आएगी, किंतु भूमंडलीकरण के दौर में पूंजी की सीमाहीन आवाजाही ने आज पूंजी को कुछेक कुबेरों की हथेलियों पर समेट रखा है, जिसके परिणामस्वरूप उत्पन्न सांस्कृतिक और सामाजिक परिवर्तन एवं चिंताओं ने सर्वाधिक ध्यान आकृष्ट किया है | बाज़ार पहले भी था और आज भी हैं, किन्तु बाज़ार संबंधित समस्या वर्तमान समय में जो है वह पहले कभी नहीं देखी गई | बाज़ारवाद पर चर्चा करने से पूर्व बाज़ार के स्वरूप और उसके विकास का जायज़ा लेने की ज़रूरत है।

सभ्यता के विकास क्रम में घुमक्कड़ जीवन शैली का परित्याग कर मनुष्य ने नवीन जीवन शैली अपनाना आरंभ किया | मानव सभ्यता में समाज की अवधारणा के स्थापित होने की प्रक्रिया के साथ ही बाज़ार के आकार व स्वरूप में क्रमशः परिवर्तन होता गया | बाज़ार मात्र वस्तुओं के क्रय - विक्रय के केंद्र न होकर मेल - जोल, सांस्कृतिक व वैचारिक विनिमय के केंद्र भी थे | ग्रामीण क्षेत्रों में लगने वाले हाट - बाज़ार इस संस्कृति की वाहक है | हमारे पारंपरिक ग्रामीण हाट - बाज़ारों ने सामाजिकता एवं संगठन की भावना को पुष्ट करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई | ऐसे पारंपरिक बाज़ार हिन्दी कहानियों में भी यत्र - तत्र नज़र आते हैं। ऐसी कहानियों में प्रसाद की 'छोटा जादूगर' एवं प्रेमचंद की 'ईदगाह' का सम्मानजनक स्थान है, जिसमें बाज़ार के साथ मानवीय मूल्य जीवित है किंतु, बाज़ारवाद ने अपने क्रमिक विकास में इस मुहिम को एक दैत्य के रूप में विकसित किया है।

पश्चिम ने बाज़ारवाद के रूप में विश्व को जो उपहार भेंट किया है, उसकी वजह से आज दुनिया हिंसा और अशांति की चपेट में है । इस हिंसात्मक युद्ध की विभीषिका झेलने वाले देशों में सर्वाधिक तबाह बच्चे ही है । बाज़ारवाद, श्रम एवं वेश्यावृत्ति के रूप में बच्चों का जमकर शोषण कर रहा है | इस शोषण चक्र ने बच्चों से उनका बचपन छीन कर उन्हें अशिक्षित और कुपोषित रहने के लिए अभिशप्त बना दिया है | बाज़ारवाद और भूमंडलीकरण के परिणामस्वरूप पारिवारिक संरचना में आए बदलाव व टूटन के सर्वाधिक भुक्तभोगी यही बालक हैं ।

1.7.3.2 भूमंडलीकरण के दौर में बच्चों की दशा :

पूंजी के वैश्वीकरण ने जिस बाज़ारवाद को जन्म दिया, उस बाज़ार पर कुछेक ढनाढ्यों ने क़ब्ज़ा कर लिया है और राष्ट्र इसकी क़ीमत, देश की पूरी आबादी से वसूल रही है । ऐसे में विभिन्न देशों के बीच बढ़ती खाई और उन देशों के भीतर बढ़ती आर्थिक विषमता की खाई ने सर्वाधिक बालकों को प्रभावित किया है । यह अनुमान लगाया गया है कि "साल 2030 तक दुनियाभर में पाँच साल से कम उम्र के 16.7 करोड़ बच्चे ग़रीबी की चपेट में होंगे जिसमें 6.9 करोड़ बच्चे भूख और देखभाल की कमी से मौत का शिकार हो सकते हैं तो, किसी को हैरानी नहीं होगी ।"[16] ऐसा नहीं है कि इन्हें रोका नहीं जा सकता है किंतु दुनिया भर में बालकों की दुर्दशा के लिए ज़िम्मेदार बाज़ारवादी शक्ति जब तक अपने आप को और पुख़्ता करने के लिए क्रूरतम औज़ार के रूप में बच्चों का दोहन बंद नहीं करेंगी तब तक स्थितियों में सुधार होने के बदले स्थितियाँ बद से बदतर होती

[16] https://www.pravakta.com/bhumandalikrit-duniya-mein-bachhe/

चली जाएंगी। यूनिसेफ (यूनाइटेड नेशंस चिल्ड्रेंस फंड्स) प्रत्येक वर्ष 'द स्टेट ऑफ़ द वर्ल्ड चिल्ड्रेन रिपोर्ट' प्रकाशित करता है, यह बच्चों से संबंधित मुद्दों का बहुत ही बारीक़ी से अध्ययन करता है और प्रत्येक वर्ष बाल जीवन से संबंधित ज्वलंत मुद्दों पर अपनी रिपोर्ट पेश करता है। 'स्टेट ऑफ़ द वर्ल्ड्स चिल्ड्रेन' ने 2013 में 'Children with disabilities' थीम को केंद्रित कर रिपोर्ट प्रस्तुत की। विकलांग बच्चों के कटु जीवनानुभवों की चर्चा करते हुए इन बच्चों के उज्ज्वल भविष्य के लिए विशिष्ट पोषण, शिक्षा एवं रोज़गार पर विश्लेषण किया गया है | 'फ़ोर डीफ़ यंग पीपल लैंग्वेज इज द की' शीर्षक लेख में कृष्णीर सेन ने लिखा है, "As a kid, I used to watch cartoon program on Fijian TV with no subtitle or sign language interpreters...we need to make media more accessible to Deaf children by captioning or interpreting television programmes and developing children's programmes that use sign language."[17] यूनिसेफ ने 2014 में 'Every child counts' थीम पर रिपोर्ट प्रस्तुत की। प्रत्येक बच्चे की व्यक्तिगत सत्ता के विकास पर ज़ोर देना ही इनका लक्ष्य रहा। वहीं 2015 में बाल अधिकार की पच्चीसवीं सालगिरह पर 'द स्टेट ऑफ़ द वर्ल्ड चिल्ड्रेन रिपोर्ट' की थीम रखी गई 'Remaining the future' और इसकी भूमिका में लिखा गया "The state of the world's children calls for brave and fresh thinking to address age-old problems that still Effect the most disadvantaged children."[18] 28 जून 2016 को यूनीसेफ़ ने 195 देशों में 'स्टेट ऑफ़ द वर्ल्ड चिल्ड्रेन रिपोर्ट' जारी की जिसमें

---

[17] UNICEF, The state of the world's children 2013 : children with disabilities, कृषनीर सेन, पृष्ठ संख्या

[18] The state of the world's children report 2015, remaining the future,unicef.org

केंद्रित विषय था 'A fair chance for every children' अर्थात सभी बच्चों के लिए समान अवसर है | इस रिपोर्ट में दुनिया भर में बच्चों की दुर्दशा एवं असमानता के पीछे ज़िम्मेदार कारकों की पड़ताल के साथ - साथ इस असमानता के कारण बाल जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव का भी विश्लेषण किया गया | साथ ही इस रिपोर्ट में इस बात की भी वकालत की गई की दुनिया को पिछले वर्षों में हुए विकास को आगे बढ़ाने के लिए सर्वाधोक ग़रीब बच्चों की मदद पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए | रिपोर्ट में स्पष्ट रूप से बताया गया है कि असमानता के कारण बच्चों का जीवन संकट में है | अतः उन्हें ज़िंदा रहने, पढ़ने, सुरक्षित रहने, बीमारियों से बचाव और एक अच्छा जीवन जीने का अवसर मिलेगा या नहीं इसमें संशय है । 'The state of the world children 2017 : children in a digital world' की रिपोर्ट में संयुक्त राष्ट्र बाल कोष (यूनिसेफ) का कहना है कि "बच्चों को डिजिटल दुनिया के खतरों से बचाने और सुरक्षित ऑनलाइन सामग्री तक उनकी पहुँच बढ़ाने की दिशा में जो कुछ भी हो रहा है वह न के बराबर है।"[19] इस रिपोर्ट में यह ख़ुलासा किया गया कि दुनिया में हर तीसरा इंटरनेट उपयोगकर्ता बच्चा है। यूनिसेफ के कार्यकारी निदेशक 'एंथनी लेक' ने कहा- "The Internet is all of these reflecting and amplifying the best and worst Human naturel"[20] अर्थात "डिजिटल तकनीक अच्छी हो या बुरी लेकिन ये हमारी ज़िंदगी की नहीं बदलने वाली हक़ीक़त बन गई है |"[21] इलेक्ट्रॉनिक क्रांति के युग में बच्चे सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही स्तर पर इनसे प्रभावित हो रहे हैं, ऐसे में 'एन्थनी लेक' का कथन

---

19 hindi.news18.com

20 UNICEF,The state of the world's children 2017 : children in a digital world,पृष्ट संख्या 4

21 https://hindi.news 18.com/news/world/america–state–of–worlds–children– 2017 – a–report–by–UNICEF–119 5915.html

बहुत मददगार साबित हो सकता है, “By protecting children from the worst digital technology has to offer, and expanding their access to the best, we can tip the balance for the better.”[22] अतएव वैश्विक धरातल पर साइबर क्राइम के शिकार बालकों पर विचार विश्लेषण करते हुए बच्चों के लिए लाभदायक एवं प्रभावी बनाने की मुहिम को एक नई दिशा देने की बात कही गई । भूमंडलीकृत बाज़ारवादी दौर में बालकों को मुख्य रूप से जिन परिस्थितियों से गुज़रना पड़ रहा है उनका सिलसिलेवार विवरण नीचे दिया जा रहा है -

1.7.3.3 कुपोषण :

कुपोषण एक ऐसा चक्र है जिसके चंगुल में बच्चे जन्म से पूर्व अर्थात माँ के गर्भ में ही फँस जाते हैं । दुनिया में आने से पहले ही उनकी नियति तय हो जाती है और यह नियति ग़रीबी और भुखमरी की काली स्याही से लिखी जाती है । कुपोषण का अर्थ है शरीर और आयु के अनुरूप पर्याप्त शारीरिक विकास का न होना | और यह अवस्था एक समय के बाद मानसिक विकास में भी अवरोध पैदा करने लगती है । 5 वर्ष से कम आयु के बच्चों के भोजन में पर्याप्त पोषक तत्वों की कमी के कारण कुपोषण की समस्या जन्म लेती है और इसके परिणामस्वरूप बच्चों में रोग प्रतिरोधक क्षमता कम होने लगती है और वह बीमारियों का शिकार होता चला जाता है । जिसके कारण बच्चों की मृत्यु भी हो जाती है | घरेलु असुरक्षा का सीधा परिणाम कुपोषण हैं | सामान्यतः खाद्य सुरक्षा का अर्थ है सब तक खाद्य की पहुँच, हर समय खद्य की पहुँच और सक्रिय स्वस्थ जीवन जीने के लिए

22 . UNICEF,the state of the world’s children 2017: children in a digital world, पृष्ट संख्या 4

पर्याप्त खाद्य | जब इनमें से कोई एक या एकाधिक घटक कम हो जाते हैं तो परिवार कुपोषण के चंगुल में फँस जाता है | खाद्य सुरक्षा सरकारी नीतियों पर निर्भर करती है किंतु उपयुक्त नीतियों के अभाव में यह ज़रूरत मंदो तक नहीं पहुँच पाती है । अनाज कभी भंडारण के अभाव में सड़ता है तो, कभी चूहों द्वारा नष्ट हो जाता है ।

कुपोषण सर्वाधिक बच्चों को प्रभावित करता है और यह छह महीने से तीन वर्ष तक की अवधि में तीव्रता से बढ़ता है । इसके परिणामस्वरूप वृद्धि बाधित होती है, मृत्यु दर में वृद्धि, दक्षता और आईक्यू में ह्रास होता है । जन्म से पूर्व माँ के गर्भ में ही बच्चे कुपोषण के शिकार हो जाते हैं क्योंकि कुपोषित माँ एक स्वस्थ बच्चे को जन्म नहीं दे सकती । कुपोषित माँ द्वारा कुपोषित बच्चे का जन्म जीवन भर की अस्वस्थता का बड़ा कारण होता है । गर्भावस्था के समय उचित आहार / पर्याप्त आहार न मिलने के कारण और घरेलू हिंसा की शिकार होने के कारण महिला के साथ - साथ बच्चे की स्थिति भी ख़राब हो जाती है । 'राष्ट्रीय पोषण संस्थान' की रिपोर्ट के अनुसार "वे सभी बच्चे जिनका जन्म के समय वज़न कम था अधिकांश ग़रीब परिवारों से आते थे ।[23]" गाँव तथा दूर दराज़ इलाकों में पर्याप्त ज्ञान के अभाव में बच्चों को पोषक आहार न खिलाकर उनके स्वादानुसार भोजन कराया जाता है जिसके कारण बच्चे कुपोषण के शिकार हो जाते हैं | लंबे समय तक कुपोषण के शिकार बच्चों को अचानक से भोजन व छात्रवृत्ति देने पर भी इस नुक़सान की भरपाई नहीं हो सकती | अतः इन बच्चों में कुपोषण इन रूपों में नज़र आती है : (1)जन्म के समय कम वज़न (2) बचपन में बाधित विकास (3) अल्प रक्ता (4) विटामिन ए की कमी (5) आयोडीन की कमी से संबंधित रोग (6) मोटापा |

---

[23] https://hi.m.wikipedia.org/wiki/भारत-में-कुपोषण

बच्चों में कुपोषण मुख्यत: दो प्रकार के होते हैं :

(1) सूखे वाला कुपोषण और (2) सूजन वाला कुपोषण

एक तिहाई बच्चों की मौत जन्म के समय कम वज़न के कारण ही होती है | इसी प्रकार कमज़ोरी के कारण टी.बी. जैसी संक्रामक रोगों के प्रभाव में वृद्धि होती है। भारत जैसे देश में कुपोषण के लिए कुछ सामाजिक कारण भी ज़िम्मेदार है। महिला एवं बच्चों के स्वास्थ्य पर काम करने वाली सरकारी संस्था "प्रयत्न" के समन्वयक 'प्रवेश वर्मा' बताते हैं, "हमारे यहाँ अलग - अलग धर्म से जुड़े लोग रहते हैं जो मांस, मछली का सेवन नहीं करते हैं, इन खाद्य पदार्थों में ज़्यादा प्रोटीन पाया जाता है। ये भी एक कारण है महिलाओं और बच्चों में पोषण की कमी है।"[24] इसके अलावा भारतीय समाज में लिंगगत भेद के कारण लड़कियों को बचपन से अंडा एवं मांस जैसे तामसी भोजन से दूर रखा जाता है, जिसके परिणामस्वरूप उसमें पोषक तत्वों की कमी हो जाती है और लंबे समय में उन्हें एनीमिया की बीमारी हो जाती है। वैश्विक पोषण रिपोर्ट 2017 में बताया गया है कि 51 फ़ीसदी महिलाएँ एनिमिक हैं। ऐसे में वे कैसे स्वस्थ बच्चे को जन्म दे पाएगी। महिलाओं के हित में कार्यरत दिल्ली स्थित ग़ैर सरकारी संस्था 'केयर' की सदस्य 'रूपा शर्मा' बताती है, "हमारे देश में लैंगिक असमानताओं के चलते आज भी लड़की व लड़के के खाने में अंतर किया जाता है, ख़ासकर ग्रामीण क्षेत्रों में या ग़रीब परिवारों में जहाँ बेटी को दूध - दही खाने को मिलता है कई जगह बेटियों के लिए ये ज़रूरी नहीं

[24] https://www.gaoconnection.com/desh/woman-and–child–malnutrition–big–problem–for– India–economic–survey–2018

समझा जाता है ।"[25] यूनिसेफ ने विश्व में बच्चों के बढ़ते मृत्युदर और इसके लिए ज़िम्मेदार कुपोषण के लिए एक मुहिम चलायी और 2018 में 'Every child alive: the urgent need to end newborn deaths' नाम से वार्षिक रिपोर्ट प्रकाशित की, जिसमें महिला सशक्तीकरण को बाल जीवन संरक्षण से जोड़कर लिखा गया है "Empowering woman and girls to make the best decisions for themselves and their families and treating them with dignity and respect during pregnancy…"[26] मई 2018 में यूनीसेफ़, डब्लूएचओ और वर्ल्डबैंक ने कुपोषित बालकों पर वार्षिक रिपोर्ट निकाली 'लेबल्स एंड ट्रेंड्स इन चाइल्ड मेलन्यूट्रीशन'। रिपोर्ट की शुरुआत ही इस पंक्ति से हुई है "The ultimate aim is for all children to be free of mailnutrition in all its forms."[27] कुपोषण के शिकार बच्चों के सामाजिक दुविधा के संबंध में रिपोर्ट में लिखा गया है "Globally, 151 million children under five suffer from standing. these children begin their lives at a marked disadvantages: they face learning difficulties in school, unless as adults and face barriers to participation

[25] https://www.gaoconnection.com/desh/woman-and–child–malnutrition–big–problem–for– India–economic–survey–2018

[26]UNICEF, every child alive: the urgent need to end newborn deaths, पृष्ठ संख्या 22

[27] UNICEF/WHO/World Bank Group joint child Malnutrition estimates, levels and trends in child malnutrition,पृष्ठ संख्या 2

is in their Communities."[28] रिपोर्ट में बताया गया है कि "Africa and Asia beer the greatest, share of all forms of malnutrition."[29]

केंद्रीय वित्त एवं कॉर्पोरेट मामलों के मंत्री अरूण जेटली ने संसद में आर्थिक सर्वेक्षण 2017-18 प्रस्तुत किया और उन्होंने बाल एवं मातृ कुपोषण को आज भी देश के लिए बड़ी चुनौती बताया। वहीं 'ग्लोबल हंगर इंडेक्स' में भारत लगातार चार वर्षों में 55 से 103वें पायदान पर आ पहुँचा है। ग्लोबल हंगर इंडेक्स की रिपोर्ट में भारत में कुपोषण के बढ़ते ख़तरे पर यह टिप्पणी की गई "The child wasting rate for the region is amplified in part by that of India, which has the region's largest population and highest level of child wasting, at 21% according to the latest data."[30] भारत में आए दिन सोशल नेटवर्किंग साइट्स एवं न्यूज़ चैनलों में भुखमरी व कुपोषण से दम तोड़ते बच्चों की ख़बरें आती रहती है। कुछ ही दिनों पहले 'टाइम्स ऑफ़ इंडिया' के कार्टूनिस्ट संदीप ने कुपोषण से कंकाल हुए बच्चे और प्रधानमंत्री की कार्टून बनाकर विकास पुरुष की धज्जियां उड़ाई। अतएव भारत में कुपोषण की समस्या प्रतिदिन विकराल रूप धरण करती जा रही है किन्तु समस्या के अनुपात पे सरकारी प्रयास नगण्य है|

---

28 UNICEF/WHO/World Bank Group joint child Malnutrition estimates, levels and trends in child malnutrition, page number 2

29 UNICEF / WHO / World Bank Group joint child Malnutrition estimates : levels and trends in child malnutrition,पृष्ट संख्या 3

30 https://www.globalhungerindex.org/.result/

1.7.3.4 बाल तस्करी और बाल - श्रम :

बाल - श्रम का अर्थ है ऐसा कार्य जिसमें कार्य करने वाला व्यक्ति क़ानून द्वारा निर्धारित आयु सीमा से छोटा हो । यह अनुचित या शोषित माना जाता है कि बच्चा स्कूल जाने की उम्र में अन्य काम करें | "औद्योगिक क्रांति के तहत चार साल से कम उम्र के बच्चे कई बार घातक और ख़तरनाक काम की स्थितियों के साथ उत्पादन वाले कारखानों में कार्यरत थे ।"[31] आर्थिक मजबूरी के तहत बच्चे पढ़ाई - लिखाई की उम्र में कारख़ाने, मिल, खदान एवं सार्वजनिक स्थलों पर मज़दूरी करते दिख जाते हैं । बहुत से ग़रीब परिवार आर्थिक अभाव में बच्चों की मज़दूरी के सहारे ही जीवित रहते हैं । बिहार, उत्तर प्रदेश, एवं अन्य राज्यों में घर से भागकर मुंबई, दिल्ली, कलकत्ता इत्यादि बड़े शहरों में काम करने वाले बच्चों की दशा क्या होती है, ये बात किसी से छिपी नहीं है । होटलों में जिसे "छोटू एक चाय मार" कह कर संबोधित किया जाता है वो, 'छोटू' किसी ग़रीब घर का बड़ा बेटा होता है, जिसे व्यवस्था बचपन में बूढ़ा बना देती है ।

बच्चे ही दुनिया का भविष्य हैं किंतु इक्कीसवीं सदी में बच्चे ही सर्वाधिक असुरक्षित है | प्राकृतिक आपदा हो या युद्ध की विभीषिका इसके सर्वाधिक भुक्तभोगी बच्चे ही रहे हैं | युद्ध और आपदा में बच्चों की तस्करी बढ़ जाती है और उनसे बाल मज़दूरी और वेश्यावृत्ति कराई जाती है । बच्चे सरकार की प्राथमिकता में है ही नहीं । तीसरी दुनिया के देशों में तो बच्चों को ध्यान रखकर कोई योजना ही नहीं बनायी जाती है । सत्ताधारियों के पास हथियार पर खर्चने के लिए पर्याप्त धन है लेकिन बच्चों की शिक्षा पर ख़र्चने की

---

[31] https://hi.m.wikipedia.org/wiki/बाल–श्रम

बारी आते ही सरकारी ख़ज़ाना ख़ाली नज़र आता है। "दुनिया में आज भी क़रीब 16.8 करोड़ बच्चे बाल मज़दूरी के लिए अभिशप्त हैं। यह संख्या दुनिया की 5 से 17 वर्ष की उम्र की दस प्रतिशत आबादी के बराबर है इनमें से क़रीब 5.5 करोड़ बच्चे ऐसे हैं जो ग़ुलामी का जीवन जी रहे हैं। भारत में क़रीब पाँच करोड़ बच्चे बाल मज़दूरी के लिए मजबूर हैं।"[32] आधुनिक एवं प्रगतिशील समाज में बाल मज़दूरी विकासमॉडल की हक़ीक़त बयां करती है। "दुनिया में जितने बच्चे बाल मज़दूरी कर रहे हैं उनमें से आधे से ज़्यादा क़रीब 7.5 करोड़ ख़तरनाक कार्यों में लगे हुए हैं।"[33] बाल - श्रम औद्योगिक क्रान्ति के आरंभ के साथ ही आरंभ हो गया था। कार्ल मार्क्स ने अपने 'कम्युनिस्ट घोषणापत्र' में कहा था 'कारखानों में मौजूदा स्वरूप के बाल श्रम का त्याग होना चाहिए।' यूनिसेफ के एक अध्ययन में पाया गया की बाल - श्रम निवारण क़ानून के कड़े रुख़ के कारण कार्यरत बालकों ने कारख़ानों व फैक्टरियों से निकाल दिए जाने के बाद रोज़ी - रोटी के लिए दूसरे रास्ते अख़्तियार किए, जो और भी भयावह स्थिति के रूप में उभर कर आए। पाँच हज़ार नेपाली बच्चे वेश्यावृत्ति की तरफ़ मुड़ गए, इसके अलावा अमेरिका में बाल - श्रम निवारण अधिनियम के लागू होने के बाद ; एक अनुमान के अनुसार पाँच हज़ार बच्चों को बांग्लादेश में उनके परिधान उद्योग में नौकरी से बर्खास्त कर दिया गया था और बहुत से लोग पत्थर तोड़ने, गलियों में धक्के खाने और वेश्यावृत्ति की ओर उन्मुख हो गए। बाल - श्रम को अवैध घोषित कर दिए जाने पर उनका सार्वजनिक एवं स्वीकार्य स्थल पर काम करना कम हो गया किंतु वेश्यावृत्ति जैसे जघन्य आपराधिक क्षेत्र में बच्चों की बाढ़ आ गयी। बाल अधिकार विशेषज्ञ 'कुशल सिंह' का इस संदर्भ में

---

[32] https://www.pravakta.com/Indias–enlightened– voice–of–the–rights-of children–of–the–earth/

[33] https://www.pravakta.com/Indias–enlightened– voice–of–the–rights-of children–of–the–earth/

कहना है कि "It says children below the age of 14 cannot be employed in Hazardous occupations. Does that mean in non-Hazardous occupations two years old child can be employed? So obviously it's a very regressive act this issue has been raised and Now an amendment is pending in the Parliament. However, it has been pending for a very long time."[34] कुछ क्षेत्रों में जहाँ अर्थाभाव बाल मज़दूरी के लिए ज़िम्मेदार हैं तो कहीं मानव तस्करी में लीन दलाल आए दिन बच्चों की तस्करी कर उन्हें देह व्यापार एवं घरेलू नौकरी के दलदल में धकेल रहे हैं। भारत का पूर्वोत्तर क्षेत्र बाल तस्करी से बुरी तरह प्रभावित है। चाय बागानों में बच्चे भी कार्यरत है और धड़ल्ले से टी-इस्टेट के मालिक सरकारी आदेश व क़ानून को ताक पर रखकर बाग़ान स्कूलों के प्रति ढिलापा बरत कर बच्चों से मज़दूरी करवा रही है। चाय बागानों ने अपने श्रमिकों के बच्चों के लिए खोले गए स्कूलों को अब धीरे - धीरे खंडहर में तब्दील करना शुरू कर दिया है। बाग़ान मालिक नहीं चाहते कि उनके श्रमिकों की पीढ़ी शिक्षित हो, वे एक नई श्रमिक पीढ़ी तैयार करना चाहते हैं जिसे शिक्षा से दूर रखने में ही बाग़ान और मिल मालिकों के लिए सस्ते का सौदा है | डालमिया, कोठारी, बिड़ला ने जो टी इस्टेट एवं फैक्ट्रियां लगायी इसके लिए उन्हें सस्ते मज़दूर चाहिए थे और बाल श्रमिक के रूप में उन्हें सर्वाधिक सस्ते मज़दूर मिल जाते हैं। बाल मज़दूरों पर कभी पारिवारिक पोषण का दबाव रहता है, कभी अपना पेट भरने जितनी ही जरूरतें रहती है। जैसे की चित्रा मुद्गल की कहानी 'मामला आगे बढ़ेगा अभी' में 'मोट्या' को अपना और अपने बाबा का पेट भरना रहता है और

[34] https://www.bbc.com/news/business–25947984/

उसकी इसी मजबूरी का फ़ायदा उठाकर उसकी मालकिन उस पर भावनात्मक दबाव डालकर उसका शोषण करती है। अतः ये हुक्मरान चाहते ही नहीं है कि बच्चों का जीवन फले - फूले। वे चाहते हैं कि बाल मज़दूरों की नियति ही मज़दूरी बनकर रह जाए। दार्जिलिंग एवं असम के चाय बागानों में सर्वाधिक बाल मज़दूर कार्यरत हैं। अगर कुछ बच्चे अभिभावकों की जागरूकता के कारण बच गए और स्कूली शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं, तो उनके जीवन पर भी दलालों का साया राहू की तरह मंडरा रहा है | इस विषय में कैलाश सत्यार्थी ने लिखा है "Unscrupulous Agents and middlemen just come into our homes when parents are away working at the tea gardens and lure young girls with new clothes and sweets. before they know it, they are on a train to a big city at the mercy of these greedy men."[35] इन बच्चों के अभिभावक पूर्वोत्तर भारत से दिल्ली मुम्बई अपने बच्चों की तलाश में भटकते हैं। उनकी अंतहीन तलाश जीवन पर्यंत रह जाती है क्योंकि अर्थाभाव के कारण वे पुलिस अधिकारियों पर कोई दबाव नहीं बना पाते और अंततः उनकी शिकायतें फाइलों में दब कर रह जाती है मानव तस्करी की समस्या पर आधारित लघु फ़िल्म 'अमोली' पश्चिम बंगाल के जलपाईगुड़ी एवं दार्जिलिंग व सुदूर पूर्व असम के चाय बागानों में बालकों की तस्करी की समस्या को उजागर करती है | भारत में सर्वाधिक मानव तस्करी के मामले क्रमशः पश्चिम बंगाल, राजस्थान व गुजरात में सर्वाधिक है। इन क्षेत्रों में क़ानून के प्रति उचित जागरूकता के अभाव में सर्वाधिक मानव तस्करी को अंजाम दिया जाता है। धन लालसा व काम के लालच में बच्चियों को उनके घर से दूर

---

[35]शिल्पा खन्ना,चाइल्ड लेबर : इंडियास हिडेन शेम,BBC,https://www.bbc.com/news/business-25947984

दिल्ली - मुंबई व कलकत्ता जैसे महानगरों में लाया जाता है और जीवन पर्यंत उन्हे गुमनामी के अंधेरे में धकेल दिया जाता है। इन बच्चों को भारतीय एंव अंतरराष्ट्रीय बाज़ारों में बेचा जाता है। इन बच्चों को अंतरराष्ट्रीय बाज़ारों तक पहुँचाने में स्थानीय गिरोह के सक्रिय भूमिका रहती है। दो से चार हज़ार के लालच में स्थानीय दलाल बच्चों की तस्करी राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय स्तर पर करते हैं। तस्करी द्वारा लाए गए बच्चों को कामगर व घरेलू नौकर के अलावा विभिन्न काले धंधों में लगाया जाता है, जैसे - देह व्यापार व बार डांसर। किशोरवय की बच्चियों को विभिन्न प्रकार के ख़तरनाक इंजेक्शन देकर समय से पहले शारीरिक तौर पर विकसित कर देह व्यापार के लिए तैयार किया जाता है और सभ्य एंव संभ्रांत समाज के दारू के ठेकों पर इनसे वेश्यावृत्ति कराई जाती है। इसके अलावा इन बच्चों को नज़रबंद घरेलू एवं कामगर नौकर के रूप में भी रखा जाता है। 5 फ़रवरी 2014 BBC की रिपोर्ट के अनुसार पूर्वोत्तर भारत असम के गाँव से तेरह वर्षीय लक्ष्मी को अगवा कर दिल्ली लाया गया और घरेलू नौकर के रूप में भेज दिया गया, जब उसे पश्चिमी दिल्ली के एक घर में रेस्क्यू किया गया है तब उसका कहना था कि "I was not allowed to rest, "she says if I did something wrong or it was not what they wanted, they hit me. If I wanted to sit down for a bit because I was so tired, they would scream at me. I was never allowed to leave the house, so I did'nt realise that I am in Delhi."[36] इस पर बच्चों की तस्करी और बाल मज़दूरी पर सालों से प्रयासरत नोबेल शांति पुरस्कार विजेता कैलाश सत्यार्थी का कहना है "This is the most ironical part of India's

[36] https://www.bbc.com/news/business– 2594 7984

growth. The middle class are demanding cheap, docile labour…The cheapest and most valuable workforce is children – girls in particular. So the demand for cheap labour is contributing to trafficking of children from remote parts of India to big cities."[37]

अतः इस सस्ते मज़दूर की चाह ने संसार के न जाने कितने बच्चों से उनका बचपन छीन लिया है किंतु इन बचपन को बचाने की कोशिश में कई सरकारी एवं निजी संस्थान कार्यरत है स्वयं कैलाश सत्यार्थी 'बचपन बचाओ' आंदोलन के तहत बचपन को बचा रहे हैं |

1.7.3.5 युद्ध का बाल जीवन पर प्रभाव :

अपनी साम्राज्यवादी व विस्तारवादी महत्वकांक्षा से ग्रसित राष्ट्र सदैव अपेक्षाकृत कमज़ोर राष्ट्र को निगलने की फ़िराक़ में रहता है ; वहीं निरंकुश तानाशाह सत्ता के नशे में चूर होकर गृह युद्ध को आमंत्रित करता है। इन दोनों ही परिस्थितियों के फलस्वरूप युद्ध की स्थिति पैदा हो जाती है। युद्ध की विभीषिका झेल रहे देशों में सबसे ज़्यादा तबाह बच्चे ही हो रहे हैं, युद्धरत एवं युद्ध प्रभावित देशों में बच्चों की तस्करी बढ़ जाती है। युद्ध ग्रस्त इलाकों के लाखों बच्चे ग़रीबी विस्थापन व हिंसा का सामना कर रहे हैं | युद्धग्रस्त देशों में बच्चों की तस्करी बढ़ जाती हैं और इनसे ज़बरन मज़दूरी व वेश्यावृत्ति कराई जाती है | युद्धग्रस्त इलाकों के लाखों बच्चे ग़रीबी, विस्थापन व हिंसा का सामना कर रहे हैं। संयुक्त राष्ट्र बालकोष (यूनीसेफ़) का कहना है कि "दुनियाभर में सात साल से

[37] https://www.bbc.com/news/business– 2594 7984

कम उम्र के क़रीब 8 करोड़, 70 लाख ऐसे बच्चे हैं जिन्होंने सिर्फ़ युद्ध और खून - ख़राबे के सिवा कुछ और देखा ही नहीं है।"[38]

युद्धग्रस्त और लड़ाई झगड़ो वाले इलाकों में रहने वाले बच्चों का मानसिक विकास सामान्य बालकों से भिन्न होता है। असामान्य परिस्थिति ही उनसे बचपन और मासूमियत दोनों छीन लेती है। यूनिसेफ़ के शुरुआती बाल विकास विभाग के मुखिया 'प्रिया ब्रिटो' का कहना है कि "हिंसक माहौल बच्चों से न सिर्फ़ उनकी मासूमियत छीन लेती है बल्कि ऐसे भावनात्मक घाव भी छोड़ देती है जिससे उनका दिमाग़ी विकास बाधित होता है और उनकी पूरी ज़िंदगी प्रभावित होती है।"[39] वैश्विक परिदृश्य पर नज़र दौड़ाए जाए तो आर्थिक उपनिवेशवाद के कारण कई देश युद्धग्रस्त है तो कई ऐसे देश भी हैं, जो गृह युद्ध में बर्बाद है। अमेरिका, चीन और रूस जैसी ताक़तवर शक्तियाँ आर्थिक उपनिवेश विस्तार की होड़ में तृतीय विश्व के देशों पर गिद्ध की तरह ताक लगाए बैठे हैं | सीरिया, ग़ाज़ा, इज़रायल, इरान, फ़िलिस्तीन, तुर्की, म्यांमार, पाकिस्तान, अफ़ग़ानिस्तान जैसे देशों के गृहयुद्ध को हवा देकर अमेरिका - रूस जैसे देश अपना आर्थिक वर्चस्व क़ायम करना चाहते हैं। नस्ल, संप्रदाय, धर्म के नाम पर हो रहे गृहयुद्ध में विश्व शक्ति का दंभ भर रहे राष्ट्र मात्र स्वार्थ साधने में लीन हैं | "आज यह व्यवस्था इतनी मानवद्रोही हो चुकी है कि इसके पास मानवता को देने के लिए विनाशकारी युद्ध और उनसे उपजी मानवीय त्रासदियों के सिवा और कुछ नहीं बचा है

[38] https//www.unmultimedia.org/radio/Hindi/archives/6309/#.XADIAaThWEc

[39] https://www.unmultimedia.org/radio/hindi/achieves/6309/#.XADIAaThWEc.

।"[40] युद्ध के सर्वाधिक भुक्तभोगी महिलाएँ एवं बच्चे ही होते हैं। मध्य एशियाई देशों में शिया - सुन्नी के नाम पर हो रही लड़ाइयों का दुष्परिणाम कौन झेल रहा है ? इज़राइल - फ़िलिस्तीन समस्या में किन की मासूमियत जल कर ख़ाक हो रही है ? सीरिया के गृहयुद्ध में पूरा देश तबाह है और दुनिया के ताक़तवर देश आपस में बंदरबांट करने में उलझे हुए हैं। 2015 में हुए युद्ध में ईरान, लेबनान, इराक़, अफ़ग़ानिस्तान और यमन से हज़ारों की संख्या में शिया लड़ाके सीरियाई आर्मी की तरफ़ से लड़ने के लिए पहुँची। शिया बहुल देश ईरान ने सीरिया में सैकड़ों लड़ाके भेजें। इस प्रकार सीरिया के राष्ट्रपति बशर-अल-असद की स्वेच्छाचारिता ने न जाने कितने मनुष्यों की आहूति ले ली ! असद की सरकार ने सीरिया में विद्रोही जनता के ख़िलाफ़ रासायनिक हथियारों का इस्तेमाल व्यापक स्तर पर किया। "BBC पूरी तरह आश्वस्त है कि सीरिया ने सितंबर 2013 से कम से कम 106 रासायनिक हमले किए। सीरिया में 2014 के बाद से OPCW के फैक्ट फ़ाइंडिंग मिशन (FFM) और ओपीसीडब्ल्यू-यूएन की संयुक्त जाँच टीम ने ज़हरीले केमिकल के इस्तेमाल की बात की है। इस जाँच टीम का कहना है कि सितंबर 2013 से अप्रैल 2018 के बीच केमिकल और हथियार के रूप में केमिकल के इस्तेमाल की बात सामने आयी है।"[41] सत्ता के नशे में चूर 'असद' ने न जाने कितने मासूमों की जान ली | इस ख़तरनाक रसायनिक हथियारों के कारण कई बच्चे अनाथ हो गए हैं और न जाने कितने बच्चे अपंग हो गए होंगे |

---

[40] (http://www.mazdoorbigul.net/archives/2467

[41] https://www.bbc.com/hindi/international/45860318

कई बच्चों ने इस युद्धरत परिस्थितियों में जन्म लिया होगा और जन्मते ही गोली बारूद की हुंकार ने उन्हें जीवनपर्यंत गूँगा - बहरा बना दिया होगा। युद्ध की पृष्ठभूमि पर कई सारे उपन्यास, छिटपुट कहानियां भी लिखी है किंतु 'बहमान गोबादी' के निर्देशन में युद्ध की पृष्ठभूमि पर बनी फ़िल्म "turtles can fly" युद्ध की त्रासदी भोग रहे बच्चों की सत्यता का जीवन्त प्रमाण प्रस्तुत करती है। युद्ध के पश्चात कैंप में जीवन व्यतीत कर रहे शरणार्थी बच्चों में किसी ने युद्ध में अपना हाथ खो दिया है, किसी ने पैर। युद्ध ने उन्हें भावनात्मक एवं शारीरिक दोनों ही स्तर पर अपंग बना दिया। अपंग बच्चे अपने मुँह से 'माइंस' को निष्क्रिय कर उसे शहर में बेचकर अपना जीविकोपार्जन कर रहे हैं। माइंस निष्क्रिय करने की प्रक्रिया में इन बच्चों की जान भी जा सकती है, किंतु पेट की आग बुझाने के लिए वे मौत को अपने मुँह से मात देकर आते हैं। युद्ध के परिणाम की कल्पना करते हुए राजेश जोशी की ये कविता कितनी प्रासंगिक सिद्ध होती है -

"काम पर क्यों जा रहे हैं बच्चे? / क्या अंतरिक्ष में गिर गयी है सारी गेंद / क्या दीमकों ने खा लिया है / सारी रंग बिरंगी किताबों को / क्या काले पहाड़ के नीचे दब गए हैं सारे खिलौने / क्या किसी भूकंप में ढह गई है / सारे मदरसों की इमारतें / क्या सारे मैदान, सारे बग़ीचे और घरों के आंगन / ख़त्म हो गए हैं एकाएक /... पर दुनिया की हज़ारों सड़कों से गुज़रते हुए / बच्चे, बहुत छोटे छोटे बच्चे / काम पर जा रहे हैं / "[42] उक्त कविता में कवि का सवाल कितना वाजिब है कि बच्चे काम पर क्यों जा रहे हैं ? शायद, बच्चों की रंग - बिरंगी किताबों को युद्ध के दिमाग़ ने खा लिया है। उनके खिलौने पर सक्रिय माइंस लगा दिए गए हैं और उनके मदरसों को शस्त्रागार में तब्दील कर दिया गया है। "दुनिया का

[42] बच्चे काम पर जा रहे हैं, राजेश जोशी,kavitakosh.org

कोई भी बच्चा / नहीं जानता है कि लोग क्यों करते हैं ? युद्ध / जबकि इस दुनिया में / कल बड़ों को नहीं इन्हीं बच्चों को जीना है / युद्ध होता है तो / बच्चे ही अनाथ होते हैं।"[43] तभी तो 'टर्टल्स केन फ़्लाइ' फ़िल्म के सभी पात्र सैटेलाइट, एगरीन, ह्येनकोव ,रीसा और अन्य पात्रों के संवाद इस कथन की सत्यता को प्रमाणित करते हैं कि - युद्ध होता है तो ये बच्चे जीवित मारे जाते हैं। युद्ध संबंधी अपने अनुभवों को साझा करते हुए 'टोरंटो इंटरनेशनल फ़िल्म फ़ेस्टिवल 2004' में 'turtles can fly' फ़िल्म के निर्देशक 'बहमान ग़ोबादी' ने 'डेविड वॉल्श' को दिए साक्षात्कार में कहा - "I went there I saw so many children without limbs, I could not deny their cry. And so many weapons, and destroyed schools miles and miles of landmines. Every Day children or injured because of these mines. The film is about for sure children bring home the impact of war more than anyone. I also believe that innocence this film is not about children. It's about these young People who have become adults prematurity, who have never had a childhood."[44] इस फ़िल्म के माध्यम से दर्शाया गया है कि अनचाहा बचपन खोना कितना त्रासद होता है। शरणार्थी कैंप में सेना द्वारा 'एग्रीन' के बलात्कार की घटना यह प्रमाणित करती है कि युद्ध में सर्वाधिक पीड़ादायी स्थिति बालकों की होती है, किंतु बालकों में भी बच्चियां अपनी योनि में युद्ध के घाव लिए फिरती है और जीवन पर्यंत असामान्य मानसिकता की शिकार हो जाती है। बचपन के बलात्कार की घटना

[43] युद्ध और बच्चे,उमेश चौहान,KavitaKosh.org

[44] https//www.wsws.org/en/articles/2004/10/ghob.–o02.html

मानसिक अवसाद में परिणत हो जाती है और बलात्कार से उत्पन्न संतान (राशि) के प्रति माता का व्यवहार सदैव असामान्य रहता है।

ऐसी असामान्य परिस्थितियों के बीच पैदा होकर, साम्राज्यवादी शक्तियों द्वारा क्रूरता पूर्वक बचपन को निगलने को तैयार, इस संसार को कोई अधिकार नहीं है कि उन बच्चों से सामान्य मानसिक विकास एवं सामान्य व्यवहार की उम्मीद करें। युद्ध की विभीषिका झेल रहे "बच्चे एक रोज़ जवान हो जाएंगे / उनसे महात्मा के व्यवहार की उम्मीद मत करना |"[45]

सामंतवाद, पूँजीवाद, बाज़ारवाद के बीच एक समानता यह भी है कि यह हमेशा कम संसाधनों से अधिकतम मुनाफ़ा कमाना चाहती है और इस क्रम में ये श्रम का ऐसा दोहन करती है कि पूंजी मुट्ठीभर कुबेरों के पास केंद्रित होकर रह जाती है | शोषण का यह तंत्र असमानता की जननी है | विश्व में लगातार साम्यवाद की समाप्ति ने पूंजी तंत्र को और पुख़्ता किया है | भारत जैसे मिश्रित अर्थव्यवस्था भी आज के दौर में लगभग पूंजीवादी हो चुकी है, ऐसे दौर में शोषण कर्ताओं ने जीवन के प्रत्येक स्तर पर अज़गर की भाँति कुंडली मार रखी है। जीवन का हर रंग फीका होता चला जा | GDP को विकास का सूचकांक मानने वाले देशों को यह समझना होगा कि विकास का मतलब केवल GDP में उछाल नहीं है, असली और टिकाऊ विकास तभी होगा जब समाज के सभी वर्गों के बच्चों का समान विकास होगा और उन्हें बराबर अवसर मिलेंगे। हमें ऐसा देश और

[45] विहाग वैभव,सीरिया के मुसलमान बच्चे,Kavitakosh.org

समाज बनाना है जहाँ सभी बच्चों को अच्छी शिक्षा स्वास्थ्य और सुरक्षित माहौल मुहैया कराया जा सके | एक ओर मनुष्य मंगल पर बसने के इरादे पाल रहा है और प्रत्येक वर्ष इस से जुड़े मिशन पर खरबों रुपया ख़र्च किया जा रहा है, वहीं दूसरी ओर पूरी दुनिया में क़रीब 12 करोड़ से ज़्यादा बच्चे शिक्षा से वंचित है। 1990 के मुक़ाबले मौजूदा दौर में पाँच साल से कम उम्र के ग़रीब बच्चों की मौत का आंकड़ा दुगना हो गया है, जिसका मुख्य कारण कुपोषण है। यूनिसेफ की रिपोर्ट के अनुसार अफ़्रीका के उप-सहारा क्षेत्र तथा दक्षिण एशिया में रहने वाले बच्चों की स्थिति सर्वाधिक दयनीय हैं |

आज के दौर में नन्ही पीढ़ी के समक्ष सबसे बड़ी या यू कहें कि सर्वाधिक विकराल समस्या के रूप में बाल श्रम, मानव तस्करी, ग़रीबी, कुपोषण, अशिक्षा, वेश्यावृत्ति एवं युद्ध की विभीषिका है। इन्हीं सारे शोषण के शिकंजों के कारण बच्चे अपना स्वाभाविक बचपन नहीं जी पा रहे हैं।

1.7.3.6 बाल श्रम संबंधित क़ानून :

भारत में बाल मजदूरी की समस्या स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही एक चिन्ता का विषय बना हुआ है। भारतीय संविधान की प्रारुप समिति इस संबंध में बिना किसी अन्य देश की सिफारिशों के आधार पर, अपने दम पर कानून तैयार करना चाहती थी। भारत में बाल मजदूरी को रोकने के लिये बनाया गया प्रारम्भिक कानून तब बना, जब बाल रोजगार अधिनियम 1938 पारित हुआ। ये अधिनियम बड़े दुखान्त अंत के साथ असफल हुआ। इसके असफल होने का सबसे बड़ा कारण गरीबी थी, क्योंकि निर्धनता बच्चों को मजदूरी करने के लिये मजबूर करती है।

भारतीय संसद ने बाल श्रम या मजदूरी से बच्चों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिये समय - समय पर कानून और अधिनियम पारित किये हैं। 14 साल की आयु से कम के बच्चों को किसी फैक्ट्री या खदानों में या खतरनाक रोजगारों (जहाँ जान जाने का ज्यादा जोखिम हो) में बाल मजदूरी को निषेध करने के लिये, हमारे संविधान में अनुच्छेद 24 के अन्तर्गत मौलिक अधिकारों को स्थापित किया गया है | इसके अलावा, अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत, ये भी प्रावधान किया गया है कि, सभी राज्य 6 से 14 साल तक के बच्चे के लिए मुफ्त शिक्षा के लिये, सभी आधारभूत संरचना और संसाधन उपलब्ध करायेगी।

संविधान के तहत बच्चों को बाल श्रम से सुरक्षित करने वाले कानून का एक समूह मौजूद है। कारखाना अधिनियम 1948, 14 साल तक की आयु वाले बच्चों को कारखाने में काम करने से रोकता है। खदान अधिनियम 1986, 18 साल से कम आयु वाले बच्चों का खदानों में काम करना निषेध करता है। बाल श्रम अधिनियम (निषेध एवं नियमन) 1986, 14 साल से कम आयु वाले बच्चों को जीवन को जोखिम में डालने वाले व्यवसायों में, जिन्हें कानून द्वारा निर्धारित की गयी सूची में शामिल किया गया है, में काम करना निषेध करता है। इसके अलावा, बच्चों का किशोर न्याय (देखभाल और संरक्षण) अधिनियम 2000 ने बच्चों के रोजगार को एक दंडनीय अपराध बना दिया है। लोकसभा ने 26 जुलाई 2016 को बालश्रम निषेध विधेयक 2016 पारित कर दिया | संशोधित विधेयक में सभी व्यवसायों या उद्योगों में चौदह साल से कम उम्र के बच्चों से काम करवाना प्रतिबंधित किया गया है | इस विधेयक में 14 साल से कम उम्र के बच्चों के लिए परिवार से जुड़े व्यवसाय को छोड़कर विभिन्न क्षेत्रों में काम करने पर पूर्ण रोक का प्रावधान किया गया है | यह संगठित और असंगठित क्षेत्र दोनों पर लागू होता है |

इसके अलावा 14 से 18 साल तक के किशोरों को स्वास्थ्य के लिए खतरनाक माने जाने वाले उद्योगों को छोड़ कर दूसरे कारोबार में कुछ शर्तों के साथ काम करने की छूट मिल जाएगी | इस आयु वर्ग के बच्चों से किसी खतरनाक उद्योग में काम नहीं कराया जाएगा | इसे शिक्षा का अधिकार, 2009 से भी जोड़ा गया है और बच्चे अपने स्कूल के समय के बाद पारिवारिक व्यवसाय में घर वालों की मदद कर सकते हैं।

1.7.3.7 बाल - श्रम 2016 संशोधन के मुख्य तथ्य -

- इस विधेयक के अनुसार चौदह वर्ष से कम उम्र के बच्चों से काम करवाना संज्ञेय अपराध माना जायेगा।
- इसके लिए नियोक्ता के साथ - साथ माता - पिता को भी दंडित किया जाएगा।
- विधेयक में चौदह से अठारह वर्ष के बीच के बच्चों को किशोर के रूप में परिभाषित किया गया है।
- इस आयु वर्ग के बच्चों से किसी खतरनाक उद्योग में काम नहीं कराया जाएगा।
- किसी बच्चे को काम पर रखने पर कैद की अवधि छह महीने से दो साल तक बढ़ा दी गयी है।
- अभी तक इस अपराध के लिये तीन महीने से एक साल तक की कैद की सज़ा का प्रावधान था।
- जुर्माना बढ़ाकर बीस हज़ार रुपये से पचास हज़ार रुपये तक कर दिया गया है।

- दूसरी बार अपराध करने पर एक साल से तीन साल तक की कैद का प्रावधान है।

1.7.3.8 बाल साहित्य की परम्परा :

भारत में बाल - साहित्य लेखन की परंपरा अत्यंत प्राचीन है। कहानियां सुनना तो बच्चों की सबसे प्यारी आदत है। कहानियों के माध्यम से ही हम बच्चों को शिक्षा प्रदान करते हैं। बचपन में हमारी दादी, नानी और हमारी मां भी हमें कहानियां सुनाती थी। कहानियॉं सुनाते - सुनाते कभी तो वे हमें परियों के लोक में ले जाती थी, तो कभी यथार्थवादी बातें सिखा जाती थीं। साहस, बलिदान, त्याग और परिश्रम ऐसे गुण हैं जिनके आधार पर एक व्यक्ति आगे बढ़ता है और ये सब गुण हमें अपनी मां के हाथों ही प्राप्त होते हैं। बच्चे का अधिक से अधिक समय तो मां के साथ गुजरता है, मां ही उसे साहित्य तथा शिक्षा संबंधी जानकारी देती है क्योंकि जो हाथ पालना में बच्चे को झुलाते हैं वे ही उसे सारी दुनिया की जानकारी देते हैं।

भारत में बाल साहित्य का अतीत बड़ा समृद्ध रहा है | हमारे यहाँ ‘पंचतंत्र’ तथा ‘जातक कथाएँ’ जैसे बाल साहित्य का ख़ज़ाना है। ’पंचतंत्र’ तथा ‘हितोपदेश’ की कहानियों में पशु - पक्षियों का मानवीकरण किया गया है तथा उसकी स्वभावगत विशेषता इस रूप में उतारी गई है जिससे बच्चों का भूल पाना असंभव है। पंचतंत्र के लेखक ‘पंडित विष्णु शर्मा’ ने ‘अमर शक्ति’ नामक राजा के मूर्ख राजकुमारों को नीति शिक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से उस पुस्तक की रचना की थी। बाद में उसका हिंदी अनुवाद हुआ, जिसके बाद विश्व के कई प्रमुख भाषाओं में अनूदित होकर यह पुस्तक विश्व साहित्य की कोठी में आ गई। रामायण, महाभारत आदि से भी छोटी - छोटी कई लोक कथाएं तथा कुछ उद्देश्य

परक आत्मकथाएं है, जिसे बाल साहित्य की श्रेणी में रखा जा सकता है। इसके अलावा 'सिंहासन बत्तीसी' और 'बेताल पचीसी' को भी मनोरंजक बाल साहित्य माना जाता है।

भले ही हिंदी में, विशुद्ध बाल - साहित्य के रचनाकारों की संख्या न के बराबर रही हो लेकिन बड़ों के लिए लिखने वाले कितने ही रचनाकारों ने समृद्ध बाल - साहित्य की रचना की है। हिंदी में जहाँ अनूदित साहित्य के रूप में बाल - साहित्य या बाल - कहानी (साहित्य) उपलब्ध हुई, वहीं मौलिक कहानियाँ भारतेंदु युग से ही उपलब्ध होनी शुरू हो गई थीं। शिवप्रसाद सितारे हिंद को कुछ विद्वानों ने बाल कहानी के सूत्रपात का श्रेय दिया है। उनकी कुछ कहानियाँ हैं - 'राजा भोज का सपना', 'बच्चों का ईनाम', 'लड़कों की कहानी'। हिंदी में बाल साहित्य का विकास उन्नीसवीं सदी में ही होने लगा था। चंद्रधर शर्मा गुलेरी की कहानी 'उसने कहा था' हिन्दी की आरंभिक श्रेष्ठ कहानियों में से एक है। यह कहानी 1915 में ही लिखी गई थी। यह बाल कहानी तो नहीं थी परंतु इस कहानी में बाल सुलभ चंचलता, जिज्ञासा तथा बालमन के संस्कारों का बड़ा सजीव चित्रण है। 'लहना सिंहना' की स्मृति में बचपन की एक छोटी सी घटना रह जाती है और इस घटना के लिए वह इतना बड़ा बलिदान करने के लिए तैयार हो जाता है। बचपन की स्मृति मानो प्रेम और बंधुत्व की मिसाल बन जाती है। लहना सिंह ने बचपन में एक आठ वर्षीय लड़की से पूछा था -"तेरी कुड़माई हो गई ?" उत्तर में 'धत्' सुनकर वह सामान्य नहीं रहा। उसी स्मृति से प्रभावित होकर बाद में वह युद्धभूमि में उसके पति तथा पुत्र की रक्षा हेतु जान की बाज़ी लगा देता है।"[46] इसके बाद प्रेमचंद की कहानी 'ईदगाह' ,मैथिलीशरण गुप्त की कहानी 'माँ', दिनकर की कविता 'चाँद का कुर्ता'

[46] विनोद कुमार सिन्हा,बाल-साहित्य: प्राचीन से अर्वाचीन तक, आजकल , पृष्ठ संख्या 48

इत्यादि अनेक बाल केंद्रित कहानियां लिखी गई । बाद में तो रामनरेश त्रिपाठी, सुभद्रा कुमारी चौहान, प्रेमचंद आदि की रचनाओं के रूप में हिंदी बाल - कहानी परंपरा का समृद्ध रूप मिलता है । जयप्रकाश भारती की पुस्तक 'बाल-साहित्य इक्कीसवीं सदी में' और प्रकाश मनु की पुस्तक 'हिंदी बाल कविता का इतिहास' इस दृष्टि से भी पढ़ी जा सकती हैं । स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात तो इस क्षेत्र में अत्यंत उल्लेखनीय प्रगति देखी जा सकती है । विष्णु प्रभाकर, जयप्रकाश भारती, राष्ट्रबंधु, हरिकृष्ण देवसरे, क्षमा शर्मा, यादवेंद्र चंद्र शर्मा, चक्रधर नलिन, दिविक रमेश, उषा यादव, देवेंद्र कुमार आदि कितने ही नाम गिनाए जा सकते हैं ।

बाल साहित्य का उद्देश्य मुख्यत : बाल साहित्य का उद्देश्य बाल मनोरंजन एवं नैतिक शिक्षा तक ही सिमटकर रह गया था, जबकि बाल साहित्य का उद्देश्य बाल पाठकों का मनोरंजन करना ही नहीं अपितु उन्हें आज के जीवन की सच्चाइयों से परिचित कराना है । आज के बालक कल के भारत का नाम रौशन करेंगें, उसी के अनुरुप उनका चरित्र निर्माण होगा । कहानियों के माध्यम से बच्चों को शिक्षा प्रदान करके उनका चरित्र निर्माण कर सकते हैं । तभी तो ये बच्चे जीवन के संघर्षों से जूझ सकेंगे । इन बच्चों को बड़े होकर अंतरिक्ष की यात्राएं करनी हैं, चाँद पर जाना है और शायद दूसरे ग्रहों पर भी । बाल साहित्य के लेखक को बाल-मनोविज्ञान की पूरी जानकारी होनी चाहिए तभी वह बालक के मानस पटल पर उतर कर बच्चों के लिए कहानी, कविता या बाल उपन्यास लिख सकता है । बच्चों का मन मक्खन की तरह निर्मल होता है, कहानियों और कविताओं के माध्यम से हम उनके मन को वह शक्ति प्रदान कर सकते हैं जो उनके मन के भीतर जाकर संस्कार, समर्पण, सदभावना और भारतीय संस्कृति के तत्व बिठा सकते

हैं। विभिन्न स्कूलों के प्राइमरी पाठ्यक्रम में ‘नैतिक शिक्षा‘ नामक विषय शामिल किया जाता है ताकि बच्चों का उचित नैतिक विकास हो |

मुख्य धाराई कथा साहित्य में जीवन के विविध पहलुओं का प्रतिनिधित्व मात्र वयस्क पात्रों ने ही नहीं किया बल्कि बाल पात्र भी यदा - कदा अपनी उपस्थित दर्ज कराते आये हैं, जो यथासंभव तेज़ दौड़ती ज़िंदगी में अकेलापन, अजनबियत, महानगरी यथार्थ एंव सामाजिक परिस्थितियों में काष्ठप्रतिमा-सा व्यवहार करने पर विवश है। ये बालक अपना व्यक्तिगत और वर्गगत महत्व भी रखते हैं। ये सामान्य भी है,और विशिष्ट भी। ये बच्चे कहीं आदर्श या महामानव के रूप में नैतिकता का पाठ पढ़ाने आये तो, कहीं मनुष्य के सामान्य, विलक्षण, गुण - अवगुण के साथ चित्रित हुए हैं। इन बालकों के चरित्र का विकास तत्कालीन समाज में बालकों की समझ के विकास के अनुरूप हुआ है। जिस प्रकार सामंती समाज की धारणाएँ खण्डित होकर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बाल समस्या जैसे- बाल अधिकार व बालश्रम पर लोकतांत्रिक चिंतन सामने आया ठीक इसी प्रकार हिंदी कथा साहित्य में उत्तरोत्तर बाल पात्रों की भाव भंगिमा और उनके प्रति लेखकों के दृष्टिकोण में अपेक्षाकृत परिवर्तन आया। एक शताब्दी से अधिक की यात्रा कर चुकी कथा साहित्य ने अनेक पड़ाव देखें और क्रमश: किस्सागो व मनोरंजन से लेकर जीवन यथार्थ से संबंध स्थापित करने के प्रमाण दिए। हिंदी कथा साहित्य समयानुसार विषयों,चरित्रों भाव भंगिमाओं तथा शैली की दृष्टि से विविधता दर्ज कराती आई |

श्री के. शंकर पिल्लई द्वारा बाल साहित्य के संदर्भ में “चिल्ड्रेन बुक ट्रस्ट” की स्थापना १९५७ में की गई थी। आज यह ट्रस्ट अपनी 50वीं वर्षगांठ मना रहा है। इस ट्रस्ट का

मुख्य उद्देश्य बच्चों के लिए उचित डिजाइनिंग व सामग्री उपलब्ध कराना है। इसमें 5-16 वर्ष तक के बच्चों के लिए बेहतर बाल साहित्य उपलब्ध है। जैसे-

पौराणिक कथाएँ : कृष्ण - सुदामा, पंचतंत्र की कहानियां, जातक कथाएँ, पौराणिक कहानियां, प्रहलाद।

ज्ञानवर्धक : उपयोगी आविष्कार, पर्वत की पुकार, रंगों की महिमा, विज्ञान के मनोरंजक खेल।

रहस्य रोमांच : अनोखा उपहार, जासूसों का जासूस, ननिहाल में गुजरे दिन, पाँच जासूस।

उपन्यास/कहानियां : 24 कहानियां, इंसान का बेटा, गुड्डी, मास्टर साहब।

महान व्यक्तित्व : महान व्यक्तित्व पार्ट एक से दस तक।

वन्य जीवन : अम्मां का परिवार, कुछ भारतीय पक्षी, छोटा शेर बड़ा शेर।

पर्यावरण : अनोखे रिश्ते।

क्या और कैसे : कम्पयूटर, घड़ी, टेलिफोन, रेलगाड़ी।

चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट ने बच्चों के लिए असमिया, बंगाली, हिन्दी, गुजराती, कन्नड़, मलयालम, मराठी, पंजाबी, तमिल और तेलगू भाषाओं में सचित्र पुस्तकें प्रकाशित की हैं। इस ट्रस्ट के परिसर में ही डा0 राय मेमोरी चिल्ड्रन वाचनालय तथा पुस्तकालय की स्थापना की गई है। जो केवल 16 वर्ष तक के बच्चों के लिए हैं। इसमें हिन्दी तथा

अंग्रेजी भाषा की 30,000 से अधिक पुस्तकें हैं। इसी क्रम में सन् 1991 में शंकर आर्ट अकादमी की स्थापना की गई है। जहां पर पुस्तक, चित्र, आर्ट तथा ग्राफिक के कार्यक्रम चलाए जाते हैं। शंकर इंटरनेशनल चित्रकला प्रतियोगिता भी पूरे देश में आयोजित की जाती है जिससे बच्चों में सृजनात्मक रुचि का विकास होता है।

पत्रिकाओं के स्तर पर अनेक भारतीय भाषाओ में चंपक, हिन्दी में बाल हंस, बाल भारती, नन्हें सम्राटनंदन तथा युवाओं के लिए मुकता प्रकाशित की जाती है। पंजाब केसरी, नवभारत टाइम्स, हिन्दुस्तान समाचार पत्रों में भी 'बालकों का कोना' बच्चों के लिए प्रकाशित किया जाता है, जिसमें बाल प्रतिभा को विकसित करने का अवसर दिया जाता है।'टाइम्स ऑफ इंडिया' के दरियागंज स्थित एन.आई.ई. (N.I.E) सेन्टर में दिल्ली के स्कूली बच्चों की रचनाओं पर आधारित शिक्षा (एजूकेशन) का पृष्ठ संपादित होता है जो अत्यंत सूचनाप्रद तथा रंगबिरंगी आभा को लेकर प्रकाशित किया जाता है, जिसमें दिल्ली के सभी स्कूलों की गतिविधियां प्रकाशित की जाती है जो कि बाल साहित्य के क्षेत्र में एक अनूठा कदम है।

आधुनिक बालसाहित्य के प्रणेता के रूप में डॉ हरिकृष्ण देवसरे ने 300 से अधिक पुस्तकें लिखी | उन्हें साहित्य के प्रतिष्ठित संस्थाओं से 25 से अधिक राष्ट्रीय एवं राजकीय पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। साहित्य अकादेमी द्वारा बालसाहित्य के क्षेत्र में समग्र योगदान हेतु वर्ष 2011 के पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया।

1.7.3.9 बाल पत्रिकाएँ : तब से अब तक :

बालकों के लिए केवल पुस्तकें ही नहीं पत्रिकाएं भी निकाली गयी।1892 में लखनऊ से 'बाल हितकारी' तथा 'विद्या प्रकाश' नामक पत्रिका प्रकाशित होने लगी थी। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने 'बाल दर्पण' पत्रिका का संपादन किया। वहीं 'छात्र हितैषी' और 'बाल प्रभाकर' पत्रिका बनारस से निकली। ईश्वर चंद्र विद्यासागर, रविंद्रनाथ टैगोर इत्यादि बांग्लाभाषी लेखकों के साथ - साथ अन्य भारतीय भाषाओं में भी बालकों के लिए विपुल साहित्य लिखा गया | 17वीं शताब्दी में बाल सखा छपने लगी, जिसके संपादक पंडित बदरीनाथ भट्ट थे, उसके प्रथम अंक में ही घोषणा हुई थी बाल सखा निकालने का उद्देश्य है बालक पत्रिकाओं में रुचि लाना, उसमें उच्च भावना भरना और उसे दुर्गुणों से निकाल कर बाहर करना, उनका जीवन सुखमय बनाना और उसमें हर तरह का सुधार करना | तमिलनाडु से बालशौरि रेड्डी ने 'चंदा मामा' का प्रकाशन कर पूरे भारत में धूम मचा दी | एक समय था जब 'बालक' तथा 'चुन्नू - मुन्नू' पत्रिकाएं भारतीय बाल समूह में धूम मचाती थी | आज भी प्रकाशन विभाग की पत्रिका 'बाल भारती' के अतिरिक्त 'चम्पा नंदन बच्चों का', 'बाल वाटिका', 'चकमक अभिनव', 'बालमन', 'एक लंबे बाल सेतु', 'अक्कड़ बक्कड़', 'लोटपोट' आदि दर्जनों पत्रिकाएं बाल साहित्य को समृद्ध कर रही है | आज़ादी से पूर्व की पत्रिकाएं नीतिपरक बाल मनोविज्ञान युक्त तथा मनोरंजक हुआ करती थी परंतु परिस्थिति के अनुसार, नई बाल पत्रिकाएं आज़ादी के बाद अपने विषय बदलने पर मजबूर होने लगी | अब ये पत्रिकाएं राष्ट्रीय सामाजिक एकता, अंधविश्वास की समाप्ति, जाति-धर्म गत भेदभाव की समाप्ति पर केंद्रित होने लगी | स्वतंत्र भारत में बाल साहित्य की अर्वाचीन स्थिति में उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ | वर्तमान युग में बाल साहित्य अपनी स्वतंत्र पहचान बना रहा है | रमेश तैलंग ने तथ्य और शिल्प की

दृष्टि से बाल साहित्य में नवीन प्रयोग किया | आज दुर्भाग्यवश देश- जाति, धर्म, वर्ग इत्यादि खंडों में विभक्त होकर आपस में टकरा रहा है, ऐसी स्थिति में लेखक ने सांप्रदायिक सौहार्द बढ़ाने के लिए बाल साहित्य को नई दिशा दी | डॉक्टर राष्ट्रबंधु ने कथा, कविता, लोरी आदि विविध विधाओं के बाल साहित्य को शिखर तक पहुँचाने में जीवन पर्यंत प्रयास किया | चंद्रमा का अपना प्रकाश नहीं, यह रोशनी चंद्रमा सूर्य से लेता है, इस वैज्ञानिक तथा भौगोलिक सत्य को बाल स्वरूप राही ने मनोरंजक ढंग से कविता में इस प्रकार उतारा है - "चंदा मामा ! कहु तुम्हारी ज्ञान पुरानी कहाँ गयी /कह रही थी बैठी चरख़ा बढ़िया नानी कहाँ गयी /सूरज से रौशनी चुराकर चाहे जितनी भी लाओ /तुम्हें तुम्हारी चाल पता है अब हमको मत बहकाओ/"[47] इस प्रकार अपनी लोक भाषा एवं लोक शैली में इन्होंने बच्चों को वैज्ञानिक सत्य से अवगत कराया। 1961 में यूरी गैगरिन और 1969 में नील आर्मस्ट्रांग ने जब अंतरिक्ष की यात्रा की तो बाल साहित्यकारों ने भी 'चलो चंदा के देश', 'मंगल लोक के जीवन की झांकी', 'यंत्र सेवक' आदी रचनाएँ प्रस्तुत कर बालकों को वैज्ञानिक शोध में उत्सुक करने की कोशिश की।

1.7.3.10 साइंस फ़िक्शन :

सर्वप्रथम यह जान लेना उचित होगा कि आखिर विज्ञान लेखन है, क्या ? वह कौन–सा गुण है जो कथित विज्ञान साहित्य को सामान्य साहित्य से अलग कर, उसे विशिष्ट पहचान देता है ? किसी साहित्य को विज्ञान साहित्य की कोटि में रखने की कसौटी क्या हो ? क्या केवल वैज्ञानिक खोजों, उपकरणों, नियम, सिद्धांत, परिकल्पना, तकनीक,

[47] विनोद कुमार सिन्हा,बाल-साहित्य: प्राचीन से अर्वाचीन तक, आजकल, पृष्ठ संख्या 49

आविष्कारों, उपकरणों आदि को केंद्र में रखकर कथानक गढ़ लेना ही विज्ञान साहित्य है ? यदि हां, तो क्या किसी भी निराधार परिकल्पना या आविष्कार को विज्ञान साहित्य का प्रस्थान बिंदु बनाया जा सकता है ? क्या वैज्ञानिक तथ्य से परे भी विज्ञान साहित्य अथवा विज्ञान फैनटेसी की रचना संभव है ? कुछ अन्य प्रश्न भी इसमें सम्मिलित हो सकते हैं | जैसे विज्ञान साहित्य की धारा को कितना और क्यों महत्त्व दिया जाए ? जीवन में विज्ञान जितना जरूरी है, उतना तो बच्चे अपने पाठ्यक्रम के हिस्से के रूप में पढ़ते ही हैं फिर अलग से विज्ञान साहित्य की जरूरत क्या है ? यदि जरूरत है तो पाठ्य पुस्तकों में छपी विज्ञानपरक सामग्री तथा विज्ञान साहित्य के मध्य विभाजन रेखा क्या हो ? एक - दूसरे से अलग दिखने वाले ये प्रश्न परस्पर संबद्ध है | यदि हम साहित्य के वैज्ञानिक पक्ष को जान लेते हैं तो आसानी होगी।

विज्ञान कथा को अंग्रेजी में ‘साइंस फेंटेसी’ अथवा ‘साइंस फिक्शन’ कहा जाता है | एक जैसे दिखने के बावजूद इन दोनों रूपों में पर्याप्त अंतर है | अंग्रेजी शब्द Fiction लैटिन मूल के शब्द Fictus से व्युत्पन्न है | जिसका अभिप्राय है - गढ़ना अथवा रूप देना अर्थात पुराने रूप का सिमटकर नए कलेवर में ढल जाना | फिक्शन को ‘किस्सा’ या ‘कहानी’ के पर्याय के रूप में भी देख सकते हैं | ‘विज्ञान–कथा’ को ‘साइंस फिक्शन’ के हिंदी पर्याय के रूप में लेने का चलन है | इस तरह ‘विज्ञान–कथा’ या ‘साइंस फिक्शन’ आमतौर पर ऐसे किस्से अथवा कहानी को कहा जाता है, जो समाज पर विज्ञान के वास्तविक अथवा काल्पनिक प्रभाव से बने प्रसंग को कहन की शैली में व्यक्त करे तथा उसके पीछे अनिवार्यतः कोई न कोई वैज्ञानिक सिद्धांत हो | ‘साइंस फेंटेसी’ के हिंदी पर्याय के रूप में ‘विज्ञान–गल्प’ शब्द प्रचलित है | Fantasy शब्द की व्युत्पत्ति लैटिन

मूल के शब्द Phantasia से हुई है | इसका शाब्दिक अर्थ है—'कपोल कल्पना' अथवा 'कोरी कल्पना' | जब इसका उपयोग किसी दूरागत वैज्ञानिक परिकल्पना के रूप में किया जाता है, तब उसे 'विज्ञान–गल्प' कहा जाता है | महान मनोवैज्ञानिक फ्रायड ने कल्पना को 'प्राथमिक कल्पना' और 'द्वितीयक कल्पना' के रूप में वर्गीकृत किया है | उसके अनुसार प्राथमिक कल्पनाएं अवचेतन से स्वतः जन्म लेती हैं, जैसे- किसी शिशु का नींद में मुस्कुराना, पसंदीदा खिलौने को देखकर किलकारी मारना | खिलौने को देखते ही बालक की कल्पना–शक्ति अचानक विस्तार लेने लगती है | वह उसकी आंतरिक संरचना जानने को उत्सुक हो उठता है | यहां तक की उसके साथ तोड़–फोड़ भी करता है | द्वितीयक कल्पनाएं चाहे वे स्वयं–स्फूर्त्त हों अथवा सायास, चैतन्य मन की अभिरचना होती हैं | ये प्रायः वयस्क व्यक्ति द्वारा रचनात्मक अभिव्यक्ति के रूप में विस्तार पाती हैं | साहित्यिक रचना तथा दूसरी कला प्रस्तुतियां द्वितीय कल्पना की देन कही जा सकती हैं | प्रख्यात डेनिश कथाकार हैंस एंडरसन ने बच्चों के लिए परीकथाएं लिखते समय अद्भुत कल्पनाओं की सृष्टि की थी | एच. जी. वेल्स की विज्ञान फंतासी 'टाइम मशीन' भी रचनात्मक कल्पना की देन है | तदनुसार 'विज्ञान–गल्प' ऐसी काल्पनिक कहानी को कहा जा सकता है, जिसका यथार्थ से दूर का रिश्ता हो, मगर उसकी नींव किसी ज्ञात अथवा काल्पनिक वैज्ञानिक सिद्धांत या आविष्कार के ऊपर रखी जाए |

हिंदी में आरंभिक 'विज्ञान–कथा' लेखन अंग्रेजी से प्रभावित था, औपनिवेशिक भारत में यह स्वाभाविक भी था | हिंदी की पहली विज्ञान–कथा अंबिकादत्त व्यास की 'आश्चर्य वृतांत' मानी जाती है, जो उन्हीं के समाचारपत्र 'पीयूष प्रवाह' में धारावाहिक रूप में 1884 से 1888 के बीच प्रकाशित हुई थी | उसके बाद बाबू केशवप्रसाद सिंह की

विज्ञान–कथा 'चंद्रलोक की यात्रा' सरस्वती के भाग 1, संख्या 6 सन 1900 में प्रकाशित हुई | संयोग है कि वे दोनों ही कहानियां जूल बर्न के उपन्यासों पर आधारित थीं | अंबिकादत्त व्यास ने अपनी कहानी के लिए मूल कथानक 'ए जर्नी टू सेंटर आफ दि अर्थ' से लिया था | केशवप्रसाद सिंह की कहानी भी बर्न के उपन्यास 'फाइव वीक इन बैलून' से प्रभावित थी | इन कहानियों ने हिंदी के पाठकों का ध्यान अपनी ओर खींचा | उनमें विज्ञान–कथा पढ़ने की ललक बढ़ी।

आरंभिक दौर में विज्ञान-कथा श्रेणी में, हिंदी में प्रकाशित ये कहानियां पाठकों द्वारा खूब सराही गईं। इन्होंने हिंदी पाठकों का परिचय नए साहित्यिक आस्वाद से कराया, जो कालांतर में हिंदी विज्ञान साहित्य के विकास का आधार बना। इसके बावजूद इन्हें हिंदी की मौलिक विज्ञान–कथा नहीं कहा जा सकता। इन रचनाओं में मौलिकता का अभाव था। यही स्थिति देर तक बनी रही | हिंदी में विज्ञान–साहित्य के अभाव का महत्त्वपूर्ण कारण बालसाहित्य के प्रति बड़े साहित्यकारों में उदासीनता भी थी। अधिकांश प्रतिष्ठित लेखक बाल साहित्य को द्वयम दर्जे का मानते थे। यहां तक कि वे बाल साहित्यकार कहलवाने से भी वे बचते थे। एक अन्य कारण था, लेखकों और पाठकों में वैज्ञानिक चेतना की कमी तथा जानकारी का अभाव | जो विद्वान विज्ञान में पारंगत थे, वे लेखकीय कौशल के कमी के चलते इस अभाव की पूर्ति करने में सक्षम न थे।

हिंदी की प्रथम मौलिक विज्ञान–कथा का श्रेय सत्यदेव परिव्राजक की विज्ञान–कथा 'आश्चर्यजनक घंटी' को प्राप्त है। बाद के विज्ञान कथाकारों में दुर्गाप्रसाद खत्री, राहुल सांकृत्यायन, डा. संपूर्णानंद, आचार्य चतुरसेन, कृश्न चंदर, डा. ब्रजमोहन गुप्त, लाला

श्रीनिवास दास, राजेश्वर प्रसाद सिंह आदि के नाम उल्लेखनीय हैं | इस तरह हिंदी विज्ञान साहित्य का इतिहास कहानी साहित्य जितना ही पुराना है | हिंदी के अलावा उर्दू एवं मराठी में भी साइंस फिक्शन लिखा गया। उर्दू में 'इज़हार असर' ने अनेक विज्ञान गल्प कथाएँ ,उपन्यास इत्यादि लिखें। उन्होंने जीवन पर्यंत इसी क्षेत्र में काम किया। ''दक्षिण भारत के मशहूर नायक रजनीकांत के प्रमुख रोल के साथ बनी फिल्म एंधिरन (रोबोट) को देख वे कह पड़े थे कि अरे यह तो उनकी ही लिखे उपन्यास मशीनों की बगावत (1953) की ही अनुकृति लगती है।''[48] साइंस फिक्शन के प्रति लेखकीय प्रतिक्रिया के रूप में दिविक रमेश का कहना है "बाल - साहित्य के क्षेत्र में भी दुर्भाग्य से गुटबाजी की अनुगूँजें सुनाई पड़ जाती हैं। दुराग्रहों और पूर्वाग्रहों का भी चलन हो चला है, इससे तुरंत बचना होगा। केवल अपने - अपने अहंकार की तुष्टि के लिए बचकानी बहसों को छोड़ना होगा। आज का बाल - साहित्य कैसा हो इसे संतुलित ढंग से समझना होगा। परियों का नाम आते ही बिदकना और आधुनिकता के नाम पर जबरदस्ती कुछ वैज्ञानिक उपकरणों के नाम जाप से बचना होगा। यह समझना होगा कि बाल - साहित्य की रचना प्रक्रिया भी वैसी होती है जैसी बड़ों के साहित्य की। आधुनिकता ट्रीटमेंट में भी हो सकती है।"[49] हालांकि यह मानना पड़ेगा कि एक शताब्दी से ऊपर की इस विकास–यात्रा में हिंदी विज्ञान साहित्य का जितना विस्तार अपेक्षित था, उतना नहीं हो पाया। इसका एक कारण संभवतः यह भी हो सकता है कि हिंदी के अधिकांश साहित्यकार गैर–वैज्ञानिक शैक्षिक पृष्ठभूमि से आए थे। उनके सामने अनेक चुनौतियां थीं। सबसे पहली

---

[48] https://indiascifiarvind.blogspot.com/2011/06/blog-post.html?m=1

[49] http://gadyakosh.org/gk/हिंदी_का_बाल-साहित्य_:_परंपरा,_प्रगति_और_प्रयोग_/_दिविक_रमेश

चुनौती थी, विज्ञान कथा की स्पष्ट अवधारणा का अभाव। उस समय तक शिक्षा और साहित्य का प्रथम उद्देश्य था — बच्चों को भारतीय संस्कृति से परिचित करना, उन्हें धार्मिक और नैतिक शिक्षा देना। नैतिक शिक्षा को भी सीमित अर्थों में लिया जाता था। धार्मिक ग्रंथों, महापुरुषों के वक्तव्य तथा उनके जीवन चरित्र को नैतिक शिक्षा का प्रमुख स्रोत माना जाता है जबकि धर्म के बग़ैर भी नैतिक शिक्षा दी जा सकती है।

द्वितीय अध्याय

चयनित कहानियों का परिचयात्मक विवरण

प्रस्तावित शोध विषय 'हिन्दी कहानियों में बाल पात्र' के लिए कुछ कहानियां चयनित की गई है, क्योंकि संपूर्ण रूप में कथा साहित्य को समेटना लघु शोध प्रबंध में असंभव जान पड़ता है। अतः शोध प्रबंध में जिन कहानियों को आधारभूत सामग्री के रूप में लिया गया है उन कहानियों का परिचयात्मक विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है -

2.1 सौभाग्य के कोड़े :

प्रेमचंद कृत कहानी 'सौभाग्य के कोड़े' में 'नथुवा' सामाजिक एवं आर्थिक रूप से कमज़ोर है, धार्मिक एंव आर्थिक अभाव नथुवा पर पूरी तरह हावी है। तभी तो वह आर्थिक अभाव में जीते हुए भी धार्मिक सड़ांध से उबरने का प्रयास तक नहीं करता है। मेमसाहब द्वारा किरस्तान स्कूल में भर्ती होने के आग्रह पर वह मेमसाहब से प्रश्न कर बैठता है कि "किरस्तान तो न बनाओगी ?"[50] राय साहब ने ठाकुर सरदार सिंह की तरह ही 'नथुवा' को बेगार नौकर की तरह रखा था। राय साहब का मानना था कि वह जिस भी हालत में रहे किन्तु अंतत: हिन्दू ही रहे। अतः इस कहानी में मूल रूप से नथुवा, एक दलित और ग़रीब बाल श्रमिक होने का दंश झेलता है।

2.2 ईदगाह :

'ईदगाह' कहानी में दलित मुस्लिम परिवार का सजीव बिम्ब है, जो पाठक को मानवीय संवेदना और करुणा से सराबोर कर देता है। प्रेमचंद अभिजात मुस्लिम समाज के सूक्ष्मतम तंतुओं की पहचान भी इन्हीं बच्चों के द्वारा कराते हैं। इसी प्रकार बच्चों की बातचीत के माध्यम से पुलिस विभाग में व्याप्त भ्रष्टाचार की ओर भी संकेत कर देते हैं।

---
[50] https://hindi.pratilipi.com/read/सौभाग्य-के-कोड़े-सौभाग्य-के-कोड़े-b93gmyh1s3zg-5q8231h4955cnk1

'मोहसिन' सिपाहियों के पहरा देने के प्रसंग पर टिप्पणी करता है "अजी हज़रत, यही चोरी कराते हैं। शहर के जितने चोर डाकू है सब इनसे मिले रहते हैं। रात को ये लोग चोरों से तो कहते हैं चोरी करो और आप दूसरे मोहल्ले में जाकर जागते रहो, जागते रहो पुकारते हैं जब भी इन लोगों के पास रुपये आते हैं।"[51] इस कहानी में प्रेमचंद ने मुख्य रूप से एक दलित मुस्लिम परिवार की दयनी स्थिति का चित्रण किया है जिसमें 'हामिद' बिन माँ बाप की औलाद है अर्थात् यतीम हो चुका है, जिसे उसकी दादी अमीना पाल रही है। पूरी कहानी ईद के दिन ईदगाह जाने और ईदगाह के पास के मेले के ब्यौरे पर केंद्रित है। अपने साथी मोहसिन, महमूद, नूरे और सम्मी द्वारा खाने - पीने की चीज़ें और खेलने की चीज़े ख़रीदे जाने के बावजूद 'हामिद' अपनी दादी के लिए 'चिम्टा' ख़रीदता है। उसके द्वारा ख़रीदा गया चिमटा यह साबित कर देता है कि हामिद ने बचपन में ही बूढ़े की भूमिका अदा की है।

2.3 छोटा जादूगर :

जयशंकर प्रसाद की कहानी 'छोटा जादूगर' का प्रमुख पात्र छोटा जादूगर है। लेखक द्वारा पूछे जाने पर वह अपना परिचय छोटा जादूगर के रूप में देता है। वह कहता है कि मुझे छोटा जादूगर ही बुलाया जाए क्योंकि यही मेरा पेशा है। पिता के जेल में रहने के कारण एवं माता के बीमार रहने के कारण वह किसी पर आश्रित नहीं हो सकता। उसे अपना पेट पालने के लिए, अपने जीविकोपार्जन के लिए स्वयं मेहनत करनी पड़ती है। अतः वह मेले में रोज़ाना खेल - तमाशा दिखाकर जो कुछ कमा पाता है उससे, अपना पेट भरता है और अपनी माता की दवाई की व्यवस्था करता है। लेखक द्वारा पूछे जाने पर छोटा जादूगर कहता है "जब कुछ लोग खेल तमाशा देखते ही हैं तो मैं क्यों न यही दिखाकर माँ की दवा करूँ और अपना पेट भरूं।"[52]

2.4 एक और ज़िंदगी :

---

[51] https://www.google.co.in/amp/s/hindi.oneindia.com/amphtml/news/features/eid-2018-read-famous-story-writer-munshi-premchand-idgah-eid-ul-fitr-461119.html

[52] http://www.hindikunj.com/2011/04/chota-jadugar.html?m=1

मोहन राकेश कृत 'एक और ज़िंदगी' कहानी के प्रमुख पात्र प्रकाश, वीणा और पलाश हैं । प्रकाश और वीणा का एक - दूसरे से पलायन कर जाने के कारण अर्थात तलाक़ के कारण प्रकाश 'निर्मला' से दूसरा विवाह कर लेता है किन्तु दूसरे विवाह में उसे निर्मला के रूप में विक्षिप्त महिला मिलती है । इससे लेखक यह संदेश देना चाहते हैं कि 'एक और ज़िंदगी' का अर्थ दूसरे या तीसरे विवाह से नहीं अपितु वैवाहिक जीवन में जो ग़लतियां हुई उन ग़लतियों को सुधारकर ही नए सिरे से एक और ज़िंदगी शुरू की जा सकती है । इस कहानी में वीणा एक करियरिस्ट महिला है जो तत्क्षणिक प्रक्रिया को तैयार बैठी है, किन्तु यही वीणा कहानी के अंत में 'प्रकाश' से पूछ बैठती है कि बच्चे के लिए किस रंग के कपड़े ख़रीदने हैं ! कहानी के अंत में दोनों सोचने लगते हैं कि दोनों को एक दूसरे की आवश्यकता है किंतु दोनों के अहं की टकराहट ने पलाश के भविष्य को चूर - चूर कर दिया । उसे तो माता - पिता दोनों का प्रेम चाहिए, फिर प्रकाश और वीणा ने उसे अपने दाम्पत्य में खिलौना क्यों बना दिया ! आख़िर पलाश का भविष्य कैसा होगा ? शायद इसी चिंता में कहानी के अंत में लेखक संकेत छोड़ जाते हैं कि प्रकाश और वीणा, पलाश की ख़ातिर शायद इस ज़िदगी को एक और मौक़ा दें ।

2.5 राजा निरबंसिया :

कमलेश्वर कृत 'राजा निरबंसिया' कहानी के प्रमुख पात्र 'चंदा' और 'जगपति' नामक दम्पति है जबकि अन्य प्रमुख पात्र बच्चन सिंह है । विवाह के लंबे समय पश्चात संतान सुख से वंचित जगपति जब अचानक यह सुनता है कि चंदा गर्भवती है तो, उसे चंदा के गर्भवती होने पर संदेह होता है कि चंदा का गर्भवती होना कहीं 'चंदा' और 'बच्चन सिंह' के अवैध संबंध का नतीजा तो नहीं है ! किंतु जगपति कभी सीधे - सीधे चंदा से यह सवाल पूछ नहीं पाता है और इसी कुंठा में अंततः वह चंदा का भी त्याग कर बैठता है | वह सोचता भी है "वह कुछ और जनती आदमी का बच्चा न जनती । वह और कुछ भी जनती कंकड़ - पत्थर ! वह नारी ना बनती,बच्ची ही बनी रहती ।"[53] जगपति स्वयं सोचता है कि औलाद ही तो वह धूरी है जो आदमी औरत के पहिए को साधकर तन के

[53] http://www.hindisamay.com/content/385/1/कमलेश्वर-कहानियाँ-राजा-निरबंसिया.cspx

दलदल से पार ले जाती है, नहीं तो हर औरत वेश्या है और हर आदमी वासना का कीड़ा । इसी आत्म ग्लानी पीड़ा और शोक में जगपति अपना अंत कर बैठता है । जगपति और चंदा के जीवन की त्रासदी में वह नवजात शिशु पिसता है ।

2.6 चकरघिन्नी :

मृदुला गर्ग कृत प्रस्तुत कहानी तीन पीढ़ियों के संबंध को प्रस्तुत करती है । यह कहानी दर्शाती है कि 'विनीता' की माँ, विनीता और 'माया'- इन तीनों पीढ़ियों में किस प्रकार मातृत्व और कामकाजी महिला के व्यक्तित्व के बीच संघर्ष जारी है ।'विनीता' की माँ एक डॉक्टर है । डॉक्टर होने के नाते वह काफ़ी व्यस्त रहती है, जिसके कारण वह अपनी बेटी विनीता को कभी पर्याप्त समय नहीं दे पाई, जिसके कारण विनीता अपनी माँ से चिढ़ी हुई रहती है । आदर्श का स्वरूप तय करने में उसे दिक़्क़त नहीं हुई थी । उसका एक ही मापदंड था । अपने माँ जैसा न होना । अर्थात् विनीता ने अपनी माँ को आक्रमक तरीक़े से नकार दिया था कि वह एक आदर्श माँ नहीं है । जीवन में माँ के प्रेम की कमी को महसूसने के कारण उसने ये तय किया कि वह भावी जीवन में अपनी माँ की तरह करियरिस्ट महिला नहीं बनेगी बल्कि एक अच्छी पत्नी और एक अच्छी माँ बनेगी । तभी तो माता - पिता द्वारा करियर के सवाल पर वह जवाब देती है । "आपने कभी यह जानने की कोशिश की है, मैं क्या चाहती हूँ, क्या पढ़ती हूँ , क्या करती हूँ , ज़िंदगी में मेरी ख़्वाहिशें क्या है ?"[54] ये सवाल माँ के प्रति उसके मन में कड़वाहट को दर्शाता है । विवाह के पश्चात विनीता एक अच्छी पत्नी, एक अच्छी बेटी, एक अच्छी बहू, एक अच्छी माँ बनने की कोशिश में चकरघिन्नी की तरह नाचती रहती है किंतु अंततः जब उसकी बारह वर्षीय बेटी, 'माया' उससे सवाल कर बैठती है कि "तुम हर वक़्त घर पर क्यों बैठी रहती हो ? कोई जॉब क्यों नहीं करती ? मेरी सब सहेलियों की मम्मी काम करती है ।"[55] अतः यहाँ आदर्श माता की छवि विनीता के लिए कुछ और है और विनीता की बेटी माया के लिए कुछ और । विनीता चाहती थी कि उसकी माँ उसे समय दे,

---

[54] संगति विसंगति,मृदुला गर्ग,पृष्ठ संख्या 507

[55] संगति विसंगति,मृदुला गर्ग,पृष्ठ संख्या 510

तो वहीं दूसरी ओर माया चाहती है कि उसकी माँ उसकी सहेलियों की मम्मी की तरह कामकाजी महिला बने। अंततः न चाह कर भी विनीता काम पर जाती है।

2.7 अनाड़ी :

मृदुला गर्ग की यह कहानी बाल श्रम पर केंद्रित है। उच्च मध्यवर्गीय समाज बाल श्रमिकों के प्रति कैसा नज़रिया और कैसा व्यवहार अख़्तियार करता है, यह कहानी इसे प्रस्तुत करती है। कहानी की प्रमुख पात्र 'सुवर्णा' है जो बारह वर्ष की है। आठ वर्ष की उम्र से वह घर - घर जाकर सफ़ाई, झाड़ू और भाड़े मलने का काम करती है। उसे भी दूसरे बच्चों की तरह स्कूल जाने का मन होता है , दूध बिस्किट खाने का मन होता है, नाख़ून रंगने का मन होता है और टी.वी. देखने का मन होता है। सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े होने के कारण वह बस अफ़सोस करके रह जाती है किन्तु वह कभी - कभी अपनी इच्छाओं की पूर्ति हेतु प्रयास करती है। इसी क्रम में एक दिन जब वह अपनी मालकिन के घर इस तरह की फरमाइशें करती है तो उसे अंततः दुत्कार कर भगा दिया जाता है। एक दिन जब अपनी मालकिन के घर सोफ़े पर चढ़ती है तो मालकिन जवाब में कहती है "अरे तब सोफ़े पर क्यों चढ़ी बैठी है।"[56] और सोफ़े पर इस तरह उसे बैठा देख मालकिन की आँखों को चुभता है और वह उसे झपटकर पकड़ती है और खींचकर सोफ़े से उठाकर घसीटती हुई बाहर ले जाती है।

2.8 फोटोग्राफी :

जैनेंद्र की कहानी 'फोटोग्राफ़ी' माँ, बच्चे और रामेश्वर नामक युवक की रेल यात्रा पर केंद्रित है। माँ अपने बच्चे के साथ सफ़र करती है और इसी सफ़र में रामेश्वर उन्हें ट्रेन में मिलता है। रामेश्वर के पास फोटोग्राफ़ी के लिए अच्छा कैमरा और स्टैंड है। वह उस कैमरा के साथ ही ट्रेन में प्रवेश करता है अतः माँ और बच्चे दोनों की दृष्टि सर्वप्रथम उसके कैमरे पर ही पड़ी। रामेश्वर द्वारा पूछे जाने पर, माँ बच्चे की तस्वीर लेने की इजाज़त देती है और तस्वीर लेने के इसी क्रम में बात आगे बढ़ती है और तस्वीर लेने के बाद

---

[56] संगति विसंगति,मृदुला गर्ग,पृष्ठ संख्या 501

उसकी माता बच्चे की फ़ोटो माँगती है। इस समय बच्चा सो रहा होता है। रामेश्वर के कैमरा में उस बच्चे की फ़ोटो नहीं रहती है क्योंकि उसके पास एक ही रिल होती है और वह उस बच्चे की माँ को सफ़ाई देने के क्रम में हाथ से गिरकर टूट जाती है किन्तु बातों का सिलसिला यहीं ख़त्म नहीं होता बल्कि उस रेल - यात्रा के बाद भी रामेश्वर और उस बच्चे की माँ दुबारा से मिलते हैं और मिलने के बाद वह बताती है जानते हो बच्चे ने तुम्हारे जाने के बाद क्या पूछा था "अम्मा तछबील वाले मामा क आँ एँ ?"[57] इस कहानी में मुख्य रूप से बच्चे की फोटोग्राफ़ी के प्रति लालसा को व्यक्त की गई है। इस कहानी का अंत भी फोटोग्राफ़ी से ही होता है जब रामेश्वर से बच्चे की माँ कहती है कि चार साल पहले उसका बच्चा मृत्यु को प्राप्त हो गया और एक साल पहले वह विधवा हो गई। वह रामेश्वर से मिलने ज़हर खाकर आयी थी और चाहती थी कि रामेश्वर उसकी फ़ोटो खींचें और उसके बेटे की फ़ोटो के साथ उस फोटों को मिलाकर बहुत सुन्दर फ़ोटो बनाए।

2.9 दिल्ली में :

जैनेंद्र की यह कहानी पति - पत्नी द्वारा गोद लिए पुत्र की कहानी है | वह गोद लिया बच्चा पति को मंदिर किनारे मिलता है, जिसे वे दोनो दंपति गोद लेते हैं | एक दिन अचानक एक स्त्री उनके घर पर आकर उनसे काम माँगती है और कहती है कि वो घर के हर तरह के काम करेगी। इस स्त्री का नाम 'पतिया' था। पतिया उस बच्चे की माँ थी, उसने उस बच्चे को जन्मा था। पतिया ने किसी से प्रेम किया था और उसके प्रेमी ने उसका त्याग कर दिया इसलिए परिवार और समाज के डर से उसने अपने संतान का त्याग कर दिया | लेकिन संतान का मोह छूटता कहा है, उसने संतान के मोह में पतिया इस घर में नौकरानी के रूप में रहती है "पतिया बच्चे को लाड़ करने,पुचकारने, खिलाने और बनाने सवारने से संतुष्ट नहीं है। वह मानो और भी कुछ ज़्यादा चाहती है एवं उस पर अपना संपूर्ण आधिपत्य चाहती है। जिसमें किसी का साझा न हो।"[58] एक माँ भला कैसे

[57] निर्मला जैन,जैनेंद्र रचनावली खंड चार, पृष्ठ संख्या 193

[58] जैनेंद्र रचनावली खंड चार निर्मला जैन पृष्ठ संख्या 253

अपनी संतान पर किसी और का अधिकार देख सकती है। सामाजिकता के नाते उसने अपनी संतान का त्याग तो कर दिया था, किन्तु अप्रत्यक्ष रूप से वह अपनी संतान के नज़दीक रहना चाहती थी | कहानी के अंत में पतिया और उसके पुत्र दोनों का त्रासद अंत हो जाता है क्योंकि अपने पिता द्वारा पहचान लिए जाने पर वह पीछे मुड़ नहीं पाती है और इस लज्जा के कारण वह अपने बच्चे को गंगा में फेंक देती है और साथ ही स्वयं भी छलांग मार जाती है।

2.10 खेल :

'खेल' बाल मानोविज्ञान पर आधारित जैनेन्द्र की बेहतरीन कहानियों में शुमार की जाती है | कहानी के दोनों ही पात्र बच्चे हैं और अपने सपनों की दुनिया में जी रहे हैं | जैनेंद्र ने उनके स्वप्न लोक और मनोरचना का बहुत ही विश्वसनीय अंकन किया है | फोटोग्राफ़ी के विपरीत खेल कहानी में कोई घटना नहीं है, इस कहानी में दो बच्चों की संवेदनाओं के साहचर्य की कहानी है। स्वर बाला बालों का भार बना रही है और उसी के बहाने अपने सपनों का संसार भी बोल रही है। मनोहर उस भाड़ को लात मारकर तोड़ देता है। 'कथक' इस कथा से निष्कर्ष निकलता है कि यह संसार क्षणभंगुर है इसमें दुख क्या और सुख क्या ?"[59] इसमें वस्तुतः अफ़सोस करने को कुछ है नहीं। यह संसार पानी का बुलबुला है जिसे फूट कर किसी रोज़ जल में ही मिल जाना है, इसी में उसकी सार्थकता भी है।

2.11 बहादुर :

अमरकांत की कहानी 'बहादुर' में बहादुर प्रमुख पात्र है | बहादुर के अलावा इस कहानी में 'निर्मला', निर्मला के पति और निर्मला का बेटा 'किशोर ' है। बहादुर एक पहाड़ी बालक है, जो निर्मला के बेटे की उम्र का है। बहादुर ग़ुस्से में अपने घर से बाहर निकल कर यहाँ आ गया है। जब बहादुर को निर्मला के घर काम करने के लिए लाया जाता है तब निर्मला उसे बाहरी तौर पर प्रेम प्रदर्शन करती है | निर्मला आंगन में आकर खड़ी होकर पड़ोसियों को सुनाते हुए कहती थी - "बहादुर आकर नाश्ता क्यों नहीं कर लेते हैं ?

[59] निर्मला जैन,जैनेंद्र रचनावली खंड चार, पृष्ठ संख्या 270

मैं दूसरी औरतों की तरह नहीं हूं, जो नौकर चाकर को तलती भुनती हूँ। मैं तो नौकर - चाकर को अपने बच्चों की तरह रखती हूँ |”[60] नौकर चाकर को अपने बच्चों के समान बताने वाली निर्मला क्रमशः बहादुर के प्रति क्रूर होती जाती है | निर्मला ही नहीं निर्मला का बेटा किशोर उत्तरोत्तर बहादुर के प्रति क्रूर एवं अहंवादी होता जाता है। बहादुर की उपस्थिति में निर्मला और किशोर दोनों क्रमशः आलसी होते चले जाते हैं और अपने हर काम के लिए बहादुर पर निर्भर रहते हैं। बात यहाँ तक बढ़ जाती है कि अब निर्मला और किशोर दोनों बहादुर पे हाथ भी छोड़ने लगते हैं। कहानीकार यह लिखते हैं कि मैंने किशोर को एक डंडे से बहादुर की पिटाई करते हुए देखा। निर्मला कुछ दूरी पर खड़ी होकर हाँ हाँ करती हुई मना कर रही थी। लेखक के घर आने पर बहादुर ने रोते हुए शिकायत लगायी “बाबूजी, भैया ने मेरे बाप को क्यों लाकर खड़ा किया।”[61] जो निर्मला शुरुआत में बहादुर को खाने के लिए पुकारती थी वही निर्मला अंततः सिर्फ़ अपने परिवार के लिए पतली - पतली रोटियां सेक कर रसोई से बाहर निकल जाती थी और बहादुर को सुनाती थी “तू कोई घर का लड़का है ? नौकर - चाकर तो अपना बनाकर खाते ही रहते हैं।”[62] इस तरह वह हमेशा बहादुर के प्रति उग्र भी होती चली जाती है और एक दिन एक रिश्तेदार द्वारा ग्यारह रुपया चोरी होने के झूठे इल्ज़ाम लगाने पर सारा का सारा दोष बहादुर पर मढ़ दिया जाता है जिससे बहादुर की आत्म सम्मान को बहुत ठेस पहुंचता है और वह घर छोड़कर चला जाता है। बहादुर के घर छोड़कर चले जाने के बाद निर्मला एवं उसके परिवार वालों को बहादुर की कमी का एहसास होता है और वे अपने किए पर पश्चाताप करते हैं।

2.12 मामला आगे बढ़ेगा अभी :

चित्रा मुद्गल की कहानी ‘मामला आगे बढ़ेगा अभी’ बाल श्रम पर केंद्रित कहानी है | इस कहानी का मुख्य पात्र ‘मोट्या’ है जो मेमसाब के घर पर काम करता है | वह शहर के

---

[60]http://www.hindisamay.com/content/10293/1/अमरकांत-कहानियाँ-बहादुर.cspx

[61] http://www.hindisamay.com/content/10293/1/अमरकांत-कहानियाँ- बहादुर.cspx

[62] http://www.hindisamay.com/content/10293/1/अमरकांत-कहानियाँ-बहादुर.cspx

किनारे झोपड़ पट्टी पर रहने वाला लड़का है जिसकी नौकरी साहब के कार धोने के लिए लगायी गई थी किन्तु धीरे - धीरे उसके व्यवहार कुशलता के कारण मेमसाहब उससे और भी काम लेने लगी और 'मोट्या' मेमसाहब के व्यवहार से प्रसन्न होकर उसे मान सम्मान इज़्ज़त देने लगा और वह अपने इस प्रेम के प्रत्युत्तर में प्रेम भावना चाहता था। 'मोट्या' अपने काम के प्रति पूरी तरह से ईमानदार था | वह अपने काम में कोई कोताही नहीं बरतता था जिसके कारण उसे पसंद किया जाता था किंतु एक दिन अपने पिता के बीमार होने के कारण वह काम पर नहीं आ पाता है और जिसके कारण उसकी पगार से पैसे काट लिए जाते हैं | पगार काटने की घटना से बहुत आहत होता है और सोचता है कि जिस मेमसाहब के लिए वह अपने काम से इतर इतनी भागा दौड़ी करता है, उसने मेरे एक दिन न आने के कारण मेरी पगार काट ली | इस घटना से आहत होकर वह मेमसाहब के सामने चिल्लाता हुआ कहता है "तुमने खाड़ा कटवा दिया न मेम साहब...अपने सामने चांटा मारने को दिया न !"[63] 'मोट्या' जिस मेमसाब को माँ समान इज़्ज़त देता था उस मेमसाब ने साहब द्वारा चांटा मारे जाने का कोई प्रतिकार नहीं किया, 'मोट्या' को इस बात का बहुत दुख हुआ | अतः यह कहानी घरेलू कामगार/बाल श्रमिकों के प्रति उच्च वर्ग के खोखली सहानुभूति का पर्दाफ़ाश करती है | उच्च वर्गीय सहानुभूति के पीछे दैत्यकारी चेहरे को देखकर 'मोट्या' कराह उठता है | मेमसाहब जिसे वह प्यार से कभी - कभी माँ भी कह दिया करता था, उसकी चुप्पी ने 'मोट्या' की मनः स्थिति को उग्र करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

2.13 कुत्ते की पूँछ :

यशपाल कृत कहानी 'कुत्ते की पूँछ' कहानी में मुख्य रूप से लेखक, उनकी पत्नी, उनका पुत्र 'बिशु' एवं दुकान पर बर्तन मांजने वाला एक छोटा सा बालक 'हरुआ' है। हरुआ के पिता ने उस दुकान वाले 'लाला' से उधार लिया था किन्तु पिता की मृत्यु के पश्चात उधार न चुका पाने की स्थिति में दुकान वाले ने हरुवा को अपने दुकान पर नौकर के रूप में रख लिया है। खेलने - कूदने की उम्र में हरुआ दुकान पर बर्तन मांज था, चाय बांटता

---

[63] http://gadyakosh.org/gk/मामला_आगे_बढ़ेगा_अभी(कहानी)_/_चित्रा_मुद्गल

था और देर रात बड़े - बड़े बर्तन धुलता था। एक दिन जब लेखक और उनकी पत्नी देर रात वापस आ रहे थे, तभी उन्होंने बच्चे को कराहे में सोया हुआ पाया और बच्चे को इस स्थिति में देखकर लेखक की पत्नी एवं लेखक का जी भर आया और उन्होंने निर्णय लिया कि वे उसे अपने घर ले जाएंगे। अंत में जब दम्पति उसे घर लेकर आए तब श्रीमती की सलाह पर उसका नया नाम हरीश रखा | शुरुआती दौर में उसे हो खिलाया - पिलाया गया है एवं उसे पढ़ाने लिखाने की व्यवस्था की गई। शुरुआत में श्रीमती चाहती थी कि हरीश को भी मनुष्य बनाया जाए। श्रीमती जी कहती है "इस लड़के के भी दिमाग़ है यह भी मनुष्य का बच्चा है और इसे मनुष्य बनाना भी हमारा कर्तव्य है।"[64] किन्तु जब हरीश ने पढ़ने - लिखने में रुचि नहीं ली तब उन्होंने धीरे - धीरे यह महसूस किया कि हरीश को मिल रहे प्यार से उनका अपना बेटा 'बिशु' असहज एवं असामान्य महसूस कर रहा है और धीरे- धीरे श्रीमति जी ने हरीश की ओर से ध्यान हटाना शुरू किया एवं उत्तरोत्तर वह हरीश से चिढ़ने लगी | उनका मानना था कि हरीश हरदम बच्चे के खाने पर ताक लगाए रहता है। श्रीमती जी हरीश के गलियों में खेलने एवं खाने की रुचि से सर्वाधिक चिढ़ी रहती थी।

2.14 गेंद :

चित्रा मुद्गल ने एकल परिवार एवं विवाह विच्छेद के पश्चात माता के साथ रह रहे अकेले बच्चे को केंद्रित कर 'गेंद' कहानी लिखी है, जिसमें संयुक्त परिवार के टूटन के परिणामस्वरूप परिवार के वृद्ध सदस्य फ़ालतू समझ कर घर से निकाल वृद्धाश्रम में फेंक दिए गए। कहानी में मूल रूप से दो ही पात्र है - बच्चा और बूढ़े सचदेवा जी। माँ के क्लीनिक चले जाने के बाद बच्चा घर में मात्र बुद्धीराम नामक नौकर के साथ ही रहता है जो उसकी देखभाल करता है | वह बालक भी बाहर निकलकर खेलना चाहता है, सामाजिक रूप से अपनी पहचान बनाना चाहता है किन्तु उसकी माता का कहना यह है कि "यहाँ के बच्चे जंगली है।"[65] करियरिस्ट माँ के अंतर्मुखी बालक और परिवार द्वारा

---

[64] http://poshampa.org/kutte-ki-poonchh/

[65] https://www.sahityashilpi.com/2009/06/blog-post_22.html?m=1

त्याग दिए गए सचदेवा जी दोनों के मर्म को व्यक्त करती यह कहानी संवेदनाओं के तंतुओं को तलाशती है, तभी तो सचदेवा जी अंततः रोते हुए स्वर में उस बच्चे से ये उम्मीद करते हैं कि वह उसे दादा जी कहकर पुकारे | वह बालक कहीं न कहीं संवेदनात्मक खालीपन की भरपाई के लिए सचदेवा जी के साथ गेंद खेलना चाहता है।

2.15 मिस पद्मा :

प्रेमचंद द्वारा रचित यह कहानी मुख्य रूप से मिस पद्म और 'प्रसाद' के प्रेम संबंधों के ईद - गिर्द ही घूमती है। वर्तमान समय में जिसे 'लिव इन रिलेशन' कह कर चिन्हित किया गया है, मिस पद्मा और प्रसाद ने उसे इतने वर्ष पूर्व जिया। पद्मा चाहती है कि वह प्रसाद से प्रेम करें किन्तु वह उस पर कोई दबाव, बंधन, बेड़ियां न डालें एवं प्रसाद भी इस संबंध से यही उम्मीद रखता है | प्रसाद ख़ुश है क्योंकि उसकी भी धारणा लगभग पद्मा से मिलती - जुलती है। वह भी नहीं चाहता कि वह एक स्त्री विशेष से बँधा रहे। पद्मा आर्थिक एवं सामाजिक रूप से सशक्त वक़ील है अतः उसे प्रसाद से धन की लालसा नहीं अपितु प्रेम की आशा है जबकि ठीक इसके विपरीत प्रसाद पद्मा के धन के प्रति मोहित होकर उसके साथ संबंध में रहता है | अंततः जब पद्मा गर्भवती होती है तब प्रसाद को वह अप्रिय लागने लगती है क्योंकि प्रसाद ने पद्मा के धन एवं पद्मा के शरीर से प्रेम किया था, न की उसकी भावनाओं और संवेदनाओं से। प्रसाद के इस रवैये से क्षुब्ध होकर पद्मा की जो दशा होती है प्रेमचंद ने उसे इन शब्दों में व्यक्त किया है "पद्मा के लिए मातृत्व अब बड़ा ही अप्रिय प्रसंग था। उस पर एक चिंता मँडराती रहती है। कभी - कभी वह भय से काँप उठी थी और पछताती। प्रसाद की निरंकुशता दिन - दिन बढ़ती जाती थी।"[66] पद्मा का इस तरह भय से काँपना स्वाभाविक था क्योंकि पद्मा के हॉस्पिटल में रहने के दौरान प्रसाद ने खुलकर अन्य युवतियों से संबंध स्थापित करना शुरू कर दिया था एवं पद्मा के पैसे को पानी की तरह बहाए जा रहा था और पद्मा ने जब बच्चे को जन्म दिया और हास्पिटल की फ़ीस भरने के लिए पैसे ढूंढें तो पता चला कि प्रसाद उसका बैंक एकाउंट ख़ाली कर पैसे लेकर किसी अन्य युवती के साथ भाग गया है

---

[66] http://gadyakosh.org/gk/मिस_पद्मा_/_प्रेमचंद

। अतः प्रेमचंद का इशारा इस ओर है कि दोनों के बीच के इस त्रासद संबंध का परिणाम अंत तक उस नवजात शिशु को ही भुगतना पड़ेगा।

2.16 'मन की बात मान' :

उषा यादव की कहानी मन की बात में कामकाजी माता पिता के बच्चों की मानसिक स्थिति का चित्रण किया गया है। इस कहानी में पति - पत्नी एवं उसके एक पुत्र (अंकित) एक पुत्री (निधि) के अलावा परिवार में एक राधा नाम की नौकरानी है, जो बच्चों की देखभाल करती है। इस कहानी में मुख्य रूप से यह दर्शाने की कोशिश की गई है कि कामकाजी माता - पिता अपने बच्चों को समय नहीं दे पाते और बच्चे नौकरानी की देख रेख में बड़े होते हैं, जबकि बच्चे चाहते हैं कि उनकी माँ उनके पास रहे। माता - पिता को अपने आस - पास न पाकर बच्चे खींझ जाते हैं और इसके परिणामस्वरूप अस्वाभाविक व्यवहार करने लग जाते हैं। इस कहानी में बालक जब भी कभी स्कूल से घर वापस आता है तो घर पर सबसे पहले अपनी माँ को ही देखना चाहता है घर में "माँ, माँ आज स्कूल में..."[67] कहते हुए प्रवेश करता है और अपनी माँ को घर पर न पाकर क्षुब्ध हो जाता है। वह इस बात की कामना करता है कि उसकी बहन निधि दुबारा से बीमार पड़ जाए। जब घर की नौकरानी राधा मालकिन से कहती है कि अंकित यह चाहता है कि राधा दुबारा से बीमार पड़ जाए, तब अंकित की माँ को लगता है कि अब वह अपनी बहन निधि से जलता है। अतः नौकरानी द्वारा अंकित की मंशा ज़ाहिर करने के बाद पिता ने अंकित को डाटा और माता ने उसे थप्पड़ मारते हुए कहा "तुम छठी कक्षा में पढ़ते हो, अब छोटे बच्चे नहीं रहे। अपनी बहन से इतना जलते - कुढ़ते होगे, मैंने सपने में भी नहीं सोचा था।"[68] इसके प्रत्युत्तर में अंकित रोता हुआ जवाब देता है स्कूल से लौटते ही मैं तुम्हें बताना चाहता था कि आज मेरे गणित टेस्ट के नंबर पता चले हैं ,पहली बार मैंने सौ में सौ नंबर लाए हैं। "इसी ख़ुशख़बरी को तो मैं तुम्हें सुनाना

[67] कामना सिंह,स्वतंत्र उतरे हिन्दी बाल साहित्य, पृष्ठ संख्या 116

[68] कामना सिंह,स्वतंत्र उतरे हिन्दी बाल साहित्य, पृष्ठ संख्या 117

चाहता था। निधि से भला क्यों जलूँगा ? उसे तो मैं बहुत प्यार करता हूँ। क़सम से।"[69] अंकित इसलिए चाहता था कि उसकी बहन निधि बीमार पड़ जाए क्योंकि निधि बीमार पड़ जाएगी तो माँ सेवा - सुश्रुषा के लिए फिर से घर पर रहने लगेगी और उसे माँ का सान्निध्य प्राप्त होगा।

2.17 बूमरैंग :

अर्चना वर्मा की कहानी बूमरैंग मुख्य रूप से एक नौकरीपेशा माँ और उसके बच्चे की कहानी है। कहानी में मुख्य रूप से तीन ही पात्र हैं। माँ-बेटा और उन दोनों से अलग रह रहे उनके पिता। माँ के पास रह रहा बच्चा अपनी माँ को ब्लैकमेल करता है कि यदि वह उसे उसके मन मुताबिक़ सामान नहीं दिलाएगी तो वह पिता के पास भी जा सकता है | वह शब्दशः ऐसा नहीं कहता किंतु अपने रवैये से अपनी माँ को यह एहसास दिलाता है। इस क्रम में वह अपनी माँ से अंधाधुंध माँग करता रहता है जिससे परेशान होकर एक दिन उसकी माँ झल्ला उठती है, "कल कहेगा कि सिनेमा देख के...आइसक्रीम खा के...ये करके...वो कर के...। पापा के पास तो तुझे जाना ही पड़ेगा। ब्लैकमेल मुझे कोई नहीं कर सकता है न तू न तेरा बाप।"[70] अपने पति के प्रति खिन्न पत्नी जब अपने बच्चे को पिता के समान व्यवहार करता हुआ पाती है और पिता की ओर झुकता हुआ पाती है तब वह अपने पुत्र को भी स्वयं से अलग कर देना चाहती है जबकि वास्तव में बालक अपने माता - पिता को मिलाने की कोशिश में अनावश्यक माँग करता है। उसे लगता है कि उसकी सारी माँगें पूरी तो नहीं की जाएगी लेकिन माँ उसे छोड़कर अकेली नहीं रह पाएगी। अंततः सेतु बनने के प्रयास में वह दोनों ध्रुव अर्थात माता - पिता दोनों ही ओर से काट दिया जाता है।

2.18 एक दिन का मेहमान :

निर्मल वर्मा की कहानी एक दिन का मेहमान में विवाहेतर संबंधों से उपजी त्रासदी का चित्रण करती है। कहानी में मुख्यरूप से तीन ही पात्र हैं - एक दूसरे से दूर जीवन व्यतीत

---

[69] कामना सिंह,स्वतंत्र उतरे हिन्दी बाल साहित्य, पृष्ठ संख्या 116

[70] राजपाट तथा अन्य कहानियाँ , अर्चना वर्मा , पृष्ठ संख्या 56

कर रहे माता - पिता और माँ के साथ रह रही 'बिंदु' । किसी ज़माने में विंदू के पिता का विवाहेतर संबंध हुआ करता था जिसके कारण बिंदु की माता ने उसके पिता को त्यागकर विदेश जाना बेहतर समझा । वर्षों तक अलग रहने के बाद भी बिंदु के पिता प्रत्येक वर्ष बिंदु की माता और बिंदु को मनाने विदेश जाते हैं । माँ को कभी पसंद नहीं की बिंदु के पिता उनके घर आए हैं किंतु जब भी बिंदु के पिता उनके यहाँ आते हैं, भारत से उसके लिए और बिंदु के लिए अपने परिवार वालों की ओर से बहुत सारा सामान देकर आते हैं । शुरुआती दौर में बिंदु की माता उसके पिता द्वारा लाए गये सामानों को जला दिया करती थी, किंतु समय के साथ - साथ वह भी तुलनात्मक रूप से नरम पड़ती दिखती है । उसने अर्थात बिंदु की माता ने अब तक दूसरा विवाह तो नहीं किया, किंतु वह अपने पति को कोसती है कि उसके कारण ही उसकी ज़िंदगी बर्बाद हो गई, अब इस उम्र में तो वह दूसरी शादी भी नहीं कर सकती । पति के द्वारा पश्चाताप किए जाने के बावजूद पत्नी उसे माफ़ करना नहीं चाहतीं । पिता के प्रति ऐसे रूखे व्यवहार को देखकर बिंदू भी क्रमशः अपने पिता के प्रति औपचारिक व्यवहार ही रखती है । वह नहीं चाहती कि उसके पिता उसके घर में ज़्यादा दिन रुके । बिंदु के पिता मेहमान के रूप में ही उनके घर आते हैं किंतु बिंदु अपने पिता को एक दिन के मेहमान से ज़्यादा कुछ नहीं समझतीं । अपने पिता के आने के एक दिन पश्चात ही वह उनसे पूछती है कि वो कब जाएँगे या फिर वो उनके लिए किसी होटेल की व्यवस्था करें । बिंदु अपने पिता से लगभग औपचारिक रूप से ही मिलती है और अपने पिता को अनचाहे संबंध के रूप में देखती है ।

तृतीय अध्याय

दांपत्य जीवन के संदर्भ में बालक

एक शताब्दी से अधिक अपनी यात्रा क्रम में हिंदी कहानी ने अनेक पड़ाव देखे और क्रमश: क़िस्सागो से लेकर जीवन यथार्थ तक सम्बन्ध स्थापित होने के प्रमाण दिए हैं | हिंदी कहानी समयानुसार विषयों, चरित्रों, भाव - भंगिमाओं तथा शैलीगत दृष्टि से विविधता दर्ज कराती आई है | इन कहानियों में जीवन के विविध पहलुओं का प्रतिनिधित्व मात्र वयस्क पत्रों ने ही नहीं किया अपितु बाल - पात्र अपनी उपस्थिति दर्ज कराते आये हैं, जो यंत्रवत् तेज़ दौड़ती ज़िंदगी में अकेलेपन, अजनबियत, महानगरीय यथार्थ एवं समाजार्थिक परिस्थितियों में काष्ठ प्रतिमा-सा व्यवहार करने पर विवश हैं | कथाकारों ने न सिर्फ बाल - पात्रों का चित्रांकन किया है, अपितु बदलते परिवेश में बालकों की ऊहापोह भरी स्थिति के पीछे कार्यरत सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक तत्वों की पड़ताल भी की है | कहानियों में आए ये बालक अपना व्यक्तिगत अस्तित्व एवं वर्गगत महत्व भी रखते हैं | ये सामान्य भी हैं, विशिष्ट भी | ये बच्चे आदर्श महामानव के रूप में नैतिकता का पाठ पढ़ाने ही नहीं आये, अपितु मनुष्य के सामान्य गुण - अवगुण के साथ चित्रित हुए हैं | इनके चरित्र का विकास तत्कालीन समाज में बालकों की समझ के विकास के अनुरूप हुआ है | इस अवधि में जिस प्रकार बालकों के संबंध में सामंती समाज की धारणाएँ खण्डित होकर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बाल - समस्याओं और बाल - अधिकारों का लोकतांत्रिक चिंतन सामने आया है, उसी प्रकार हिंदी कहानियों में बाल - पत्रों की भाव-भंगिमा और उनके प्रति लेखकीय दृष्टिकोण में अपेक्षित परिवर्तन आया है |

मुख्य धाराई कहानियों से इतर पंचतंत्र या अन्य बाल केन्द्रित कहानियों की एक लम्बी परंपरा रही है, किन्तु इस वर्ग की अधिकांश कहानियों में बालकों के स्थायी भाव के रूप में उनकी मासूमियत, शरारत, उनके हँसने - गुदगुदाने का जीवंत चित्रण उपलब्ध है | जबकि इस स्थाई तत्व के अतिरिक्त बालकों के सामाजिक यथार्थ को व्यक्त करने वाले पहलुओं पर भी विचार अपेक्षित है |

हिंदी साहित्य में मनोवैज्ञानिक कहानियों का आरंभ 'चंद्रधरशर्मा गुलेरी' की 'उसने कहा था' से माना जा सकता है | बचपन में प्रेमिका के खो जाने के कारण 'लहनासिंह' के अंतर्मन में जो अंतर्द्वंद्व उत्पन्न होता है, यह कहानी उस सशक्त मनोविज्ञान को प्रस्तुत करती है | इसके अलावा प्रेमचंद की 'ईदगाह', जयशंकर प्रसाद की 'छोटा जादूगर', जैनेंद्र की 'पाजेब', 'खेल', 'फोटोग्राफी', 'चोर', 'दिल्ली में', मोहन राकेश की 'एक और ज़िन्दगी', अखिलेश की 'जलडमरूमध्य' इत्यादि कहानियों में बाल्यावस्था से लेकर किशोरावस्था तक के बालकों का चित्रण मिलता है | यशपाल की कहानियों में बालकों को एक विशिष्ट प्रधानता मिली है | 'फूलो का कुरता', 'कुत्ते की पूँछ' इत्यादि कहानियों को इस क्रम में लिया जा सकता है |

हिंदी कथा साहित्य का आरंभिक सोपान सामंतवादी - पूंजीवादी शक्तियों से प्रभावित रहा तो, समकालीन कथा जगत पर भूमंडलीकरण एवं बाजारवादी प्रभाव हावी है | अतएव हिंदी कहानी के आरंभिक चरण से समकालीन कहानियों तक मूलत: बाल - पात्रों के दो आयाम है- सक्रिय [ACTIVE] और निष्क्रिय [PASSIVE] | सक्रिय पात्र

वे हैं - जो सम्पूर्ण घटनाओं और परिस्थितियों को संचालित करते हैं और निष्क्रिय पात्र वे हैं, जो परिस्थितियों से संचालित हो रहे हैं |

3.1 दाम्पत्य जीवन के सन्दर्भ में बालक :

स्त्री - पुरुष सम्बन्ध का यह अखंड सत्य है कि नर को नारी की और नारी को नर की तलाश रहती है | दो विपरीत ध्रुव होने के बावजूद भी एक - दूसरे की अनिवार्यता अपरिहार्य है | भारतीय परिप्रेक्ष्य में संतान - सुख को दाम्पत्य जीवन की पूर्णता माना जाता है और स्त्री की पूर्णता मातृत्व में स्वीकारी गई है | संतान जहाँ सफल दांपत्य-जीवन को नवीन सुख से अवगत करता है, वहीं असंतुलित दाम्पत्य को पुन: संबंध सृजन का अवसर प्रदान करती है | इसी असंतुलन के क्रम में बालक कई बार मानसिक पीड़ा, कुंठा, अपराधी मानोवृत्ति एवं अजनबियत के शिकार हो जाते हैं | ऐसे में यह विचारणीय प्रश्न है कि नि:संतान दम्पति संतान सुख प्राप्ति के पश्चात्, क्या संतान संबंधी दायित्व का निर्वाह कर पाते हैं ?

सांस्कृतिक विविधता और परिवेशगत भिन्नता के कारण भारतीय सन्दर्भ में दाम्पत्य के कई स्वरूप देखने को मिलते हैं | ग्रामीण परिवेश में लड़ – झगड़ कर भी पुन: परिवार के संचालन हेतु दम्पति आपसी अनबन भुला कर पूर्ववत जीवन - यापन कर लेते हैं | वहीं शहरों में लोकलाज या बच्चों के भविष्य की चिंता ही दम्पति को आपस में जोड़े हुए है | आज का युवा स्वकेंद्रित है, अत: अस्तित्ववादी अतिवाद एवं पति - पत्नी के अहं के टकराव के कारण उपजा अधकचरा दाम्पत्य और पति - पत्नी की प्रशासनिक व्यस्तता के कारण एक-दूसरे के प्रति उपजी संवेदनशून्यता के बीच बाल - मन ही पिसता है |

संपन्न परिवार की विलासी प्रवृत्ति और संबंधों को राशि-तुला में तौलने की मानसिकता ने मानव को संवेदनशून्य बना दिया है | वहीं दूसरी ओर मध्यवर्ग की स्थिति सर्वाधिक दयनीय एवं द्वन्द्वग्रस्त है, क्योंकि वह परंपरा और आधुनिकता के सामंजस्य में फंसा हुआ है | सीमित आय और अनंत इच्छाओं की रस्साकशी में वह निराशा एवं कुंठा का शिकार होता चला जाता है | ऐसे में कहानियों में अपनी उपस्थिति दर्ज कराते बालक इन्हीं परिस्थितियों के कृत - दास बनकर उभरते हैं |

3.2 कामकाजी माता - पिता और बालक :

आधी आबादी का हिस्सा होकर भी परिवार एवं अर्थसत्ता से बेदख़ल रही स्त्री ने अधिकार प्राप्ति के लिए उन्ही औज़ारों का प्रयोग किया जिनका प्रयोग कर पुरुष ने स्त्री को परतंत्रता की बेड़ियों में बाँधे रखा | स्त्री ने अर्थसत्ता को अपनी स्वतंत्रता की प्रथम सीढ़ी के रूप में प्रयोग किया, किन्तु इसके परिणाम स्वरुप उसे [स्त्री] दोहरे दोहन का शिकार होना पड़ा, क्योकिं आर्थिक स्वतंत्रता ने उसके हाथ से चूल्हा छीन कर गैस थमा दिया | प्रशासनिक कामकाज से थकी - हारी स्त्री अब भी घर जाकर पति के लिए चाय बनती है | वह आज भी ये उम्मीद नहीं कर सकती है कि घर से वापस लौटने पर कोई उसके लिए चाय की ट्रे बढ़ाये | इस दोहरे दोहन के क्रम में बालक अन्तर्मुखी या उग्र होता चला जाता है | मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि बालक के भावनात्मक स्तर पर माँ अधिक हावी होती है | ऐसे में माँ का बच्चे को समय न दे पाना, उसकी [बालक] कुंठा का कारण बन सकता है | मात्र माँ ही नहीं, पिता का बालकों से दूर होना भी बालकों की

अंतर्व्यथा का कारण बन सकती है | ऐसे में ज़रूरी है कि माता - पिता अपने कामकाजी तथा भावनात्मक जीवन में संतुलन बनाये रखे |

हिन्दी कथा जगत में कामकाजी दंपति के संतानों के अन्तर्मन की व्यथा को व्यक्त करती अनेक कहानियाँ लिखी गई है | मृदुला गर्ग द्वारा आधुनिक दाम्पत्य जीवन को केन्द्र में रख कर लिखी गई कहानी 'चकरघिन्नी' माता और संतान के द्वंद्व को उजागर करती है | इस कहानी में क्रमश: दो पीढ़ियों के बच्चें - 'विनीता' और 'माया' का मर्म उद्घाटित किया गया है | करियरिस्ट माँ की बेटी 'विनीता' को बस इस लिए डॉ. नहीं बनना क्योकिं कामकाजी व्यस्तता के कारण उसकी माँ ने परम्परगत माता सुलभ कर्तव्यों का वहन नहीं किया | लेखिका साफ़ - साफ़ शब्दों में लिखतीहैं –"उसकी सहेलियों की माँ दादी जिस छवि का वक़्त - बेवक़्त बखान करती थी, वह उसकी माँ की नहीं थी | कभी खाना बना परोसकर इसरार करके पति - पुत्री को खिलाया नहीं...|"[71] अतएव विनीता के लिए आदर्श का मानक था अपनी माँ जैसा न होना | इस अनुभव के साथ-साथ पास-पड़ोस वालों से सुनी बातों ने भी उसके मनोभाव को पुष्ट किया एवं प्रतिक्रिया स्वरुप माँ द्वारा करियर चुनाव के प्रश्न पर बोल पड़ी- "अच्छी पत्नी और माँ बनना चाहती हूँ |"[72] अन्ततः विवाहोपरांत अच्छी पत्नी के तमाम मानकों के दैनन्दिन पालन करने के पश्चात् भी वह परंपरा और आधुनिकता की पाट में फंस कर रह जाती है, जब बारह वर्षीय माया [विनीता की बेटी] कहती है, "तुम हर वक़्त घर पर क्यों बैठी रहती हो ? कोई जॉब क्यों

[71] मृदुला गर्ग,शहर के नाम,पृष्ट संख्या 51

[72] मृदुला गर्ग,शहर के नाम,पृष्ट संख्या 53

नहीं करती ? मेरी सब सहेलियों की मम्मी काम करती है|"[73] माँ को करियर और पारिवारिक कामकाज की दोहरी मार झेलने पर मजबूर करने वाली 'माया' का मनोविज्ञान कहाँ से प्रभावित/संचालित है ? कहना न होगा ! माया अपनी सहेलियों की माँ की तरह अपनी माँ को दफ़्तर जाते देखना चाहती है जबकि विनीता [माया की माँ] अपनी माँ से आदर्श माँ की अपेक्षा करती रही | 'विनीता' के लिए आदर्श माँ वह है जो अपने बच्चों को समय दे, जबकि 'माया' की सोच अपनी माँ से सर्वथा भिन्न है | दो पीढ़ियों के बच्चों के बीच माँ के आदर्श छवि की कल्पना में कितना अंतर आ गया है |

ऐसी ही मनःस्तिथि को उद्घाटित करती 'उषा यादव' की कहानी 'मन की बात' है | बालक जब कभी स्कूल से या खेल कर घर वापस आता है वह चाहता है कि घर पर उसे सबसे पहले माँ ही दिखे | रोजाना "माँ,माँ आज स्कूल में..."[74] कहते हुए उत्साह से घर में प्रवेश करता है लेकिन नौकरानी द्वारा प्रत्युत्तर में यह सुनने को मिलता है-"मालकिन घर में नहीं है अंकित भैया,वे दफ्तर गई है |"[75] इसबात पर अंकित खींझ उठाता और थके क़दमों से कमरे की ओर चला जाता था | एक दिन नौकरानी द्वारा उसके क्रोध का कारण पूछे जाने पर कहता है "मै कह देता हूँ राधा, मेरा दिमाग मत चाटो, जाओ हटो यहाँ से |"[76] आख़िरकार नौकरानी जब उसे खाने के लिए माना लेती है तभी बात-चीत के दौरान अंकित नौकरानी से पूछता है "क्या ऐसा कोई उपाय है, जिससे निधि दुबारा बीमार पड़

[73] मृदुला गर्ग,शहर के नाम,पृष्ठ संख्या 57

[74] कामना सिंह,स्वातंत्र्योतर हिंदी बाल साहित्य,पृष्ठ संख्या 116

[75] उषा यादव,मन की बात,गद्यकोश

[76] उषा यादव,मन की बात,गद्यकोश

जाये |"[77] यह सुनते ही नौकरानी अंकित पर भड़कती है और शाम को माता-पिता के लौटने पर यही बात बढ़ा-चढ़ा कर प्रस्तुत करती है | प्रतिक्रियास्वरुप पिता ने डाट लगाई और माता ने थप्पड़ मार कर कहा – "तुम छठी कक्षा में पढ़ते हो | अब छोटे बच्चे नहीं रहे | अपनी बहन से इतना जलते-कुढ़ते होगे, मैंने सपने में भी नहीं सोचा था |"[78] इस थप्पड़ के प्रत्युत्तर में कोमल बालक भरी आँखों से अपनी कोमल भावना व्यक्त करता है- "निधि की बीमारी में तुम घर पर रहीं तो मुझे बहुत अच्छा लगा था | स्कूल से लौटते ही तुम्हें सारी बातें बताता था | वे सारी बातें राधा से थोड़े ही बताई जा सकती है | सिर्फ इसलिए मैंने चाह था - निधि दुबारा बीमार पड़ जाए |...आज मेरे गणित टेस्ट के नंबर पता चले थे, पहली बार मेरे सौ में से सौ नंबर आये थे | इसी खुशखबरी को तो मैं तुम्हें सुनना चाहता था | निधि से भला क्यों जलूँगा ? उसे तो मैं बहुत प्यार करता हूँ | क़सम से |"[79] माँ से बच्चों की बहुत सी उम्मीदें होती है किन्तु ऐसे में जब उन्हें माँ का सान्निध्य ही न मिल पाए तो उनका बचपन विकृत हो जाता है |

'अर्चना वर्मा' की कहानी "बूमरैंग' में ऐसी ही एक नौकरीपेशा माँ है, जिसके दाम्पत्य-द्वंद्व का फायदा पड़ोसी उठाते हैं | वैवाहिक जीवन की इस दुविधा का लाभ उठाकर बच्चा अपनी ज़रूरतों के लिए माँ को 'इमोशनल ब्लैकमेल' करता है | इस पर माँ को अपना स्वाभिमान स्खलित होता दिख पड़ता है | वह बच्चे पर झल्ला उठती है, "कल कहेगा कि सिनेमा देखके...आइसक्रीम खाके...ये करके...वो करके...| पापा के पास तो

---

[77] उषा यादव,मन की बात,गद्यकोश

[78] उषा यादव,मन की बात,गद्यकोश

[79] उषा यादव,मन की बात,गद्यकोश

तुझे जाना ही पड़ेगा | ब्लैकमेल मुझे कोई नहीं कर सकता | न तू न तेरा बाप |”[80] वास्तव में बालक अपने माता-पिता को मिलाने की कोशिश में अनावश्यक मांग करता है, उसे लगता है कि उसकी सारी मांगे पूरी तो नहीं की जाएगी लेकिन माँ उसे छोड़कर अकेली नहीं रह पायेगी | अन्ततः सेतु बनने के प्रयास में वह दोवो ध्रुवों से काट दिया जाता है | जहाँ ‘आप का बंटी’ का ‘बंटी’ सेतु की भूमिका न निभा पाने की कारण गिरा दिया गया, वहीँ ‘बूमरैंग’ कहानी का बालक माता-पिता के दाम्पत्य को बचाने की कोशिश में उस परिदृश्य से ही गायब कर दिया गया |

अतएव परंपरा एवं आधुनिकता के निर्वाह के क्रम में बाल-पात्रों की मनोदशा को समझने वाले अभिभावक जब उनके साथ समय व्यतीत नहीं कर पाते तब माता - पिता के साथ - साथ बालकों की हीन ग्रंथि बढ़ने लगती है और वे अंतर्मुखी या उग्र मनोवृत्ति के शिकार होने लगते हैं |

3.3 **विवाह विच्छेद और बाल जीवन :**

विवाह विच्छेद भारतीय दाम्पत्य जीवन की वह ट्रेडेडी है जिसके सर्वाधिक भुक्तभोगी बालक होते हैं। तलाक के फ़ैसले से पति - पत्नी सकारात्मक रूप से भविष्योन्मुख हो या न हो, किन्तु बालक की स्थिति दयनीय हो जाती है | आधुनिकता एवं शहरीकरण के परिणामस्वरूप संबंधों में टूटन, बिखराव और त्रासद स्थितियां आई है । पितृसत्ता ने हमेशा स्त्री का शोषण किया। स्त्री के प्रति उसकी दृष्टि हमेशा भोगवादी - वस्तुवादी ही रही । आधुनिकता ने पूंजीवादी सोच पर प्रहार किया, जिससे नारी घर की चाहरदीवारी

---

80 अर्चना वर्मा, बूमरेंग,गद्यकोश

तोड़कर बाहर आई। ऐसे में पुरुष स्त्री से यदि सीता बने रहने की उम्मीद लगा बैठे तो, इसका परिणाम अहं का टकराव और पारिवारिक टूटन ही हो सकता है। विकासशील देशों में अर्थोपार्जन एक बहुत बड़ी विडंबना है। परपुरुष या परस्त्री गमन, दम्पति में वैचारिक एंव भावनात्मक असमानता, पारिवारिक ज़िम्मेदारी में कोताही, ऐसे कई कारक हैं जो तलाक़ के कारण बनते हैं। बाज़ारवाद, औद्योगिकरण एवं बदलते मूल्यों के कारण दांपत्य जीवन में टूटन व संत्रास आ रहे हैं, जिसकी अनुगूंज बच्चों के मन मस्तिष्क में सुनाई पड़ रही है। "वे माँ बाप जो बच्चों के साथ हमेशा नहीं रहते, उनके गोपनीय मंज़िलों के बारे में कुछ नहीं जानते, जो उनके अभाव की नींव पर ऊपर ही ऊपर बनती रहती है।"[81] मोहन राकेश की कहानी 'एक और ज़िंदगी' के 'प्रकाश' और 'वीणा' का एक - दूसरे से पलायन, समस्या का समाधान नहीं है। प्रकाश की तरह वीणा भी अपने करियर के प्रति महत्वाकांक्षी है। दोनों अलग - अलग जगह काम करते हुए अपना - अपना स्वतंत्र ताना - बाना बुन कर जी रहे थे और लोकाचार के नाते कभी - कभी मिल लेते थे। वीणा परम्परागत स्त्री की छवि के विपरीत जाकर तत्क्षणिक प्रतिक्रिया को तैयार बैठी है। प्रकाश और वीणा के अहं की टकराहट में पलाश का भविष्य अंधकारमय प्रतीत होता है। दाम्पत्य जीवन की टकराहट में समाज क्यों वीणा से ही उम्मीद लगाए बैठा है कि वह प्रकाश के समक्ष घुटने टेक दे। स्वाभिमान के अधिकार क्षेत्र में क्या पुरुष मात्र ही आते हैं ? स्त्री तक आते - आते वह स्वाभिमान, अहंकार नाम से क्यों अभिहित किया जाने लगता है ? पलाश के दुनिया में आने के बाद वीणा को लगता था कि "...इस तरह जान बूझ कर उसे फँसा दिया गया है। प्रकाश सोचता था कि अनजाने में ही

---

[81] निमल वर्मा,एक दिन का मेहमान,hindisamay.com

उससे एक क़सूर हो गया है।"[82] पलाश के सान्निध्य में रहकर वीणा के भीतर का ममत्व इतना प्रबल हो जाता है कि जो वीणा कभी प्रकाश को अपने गले का फन्दा समझती थी उसी वीणा से जब प्रकाश पूछता है "क्या तुम पसंद करोगी की बच्चे को मुझे सौंप दो और खुद स्वतंत्र हो जाओ ?"[83] प्रत्युत्तर में वीणा कहती है "ज़रूरत पड़ने पर मैं सुप्रीम कोर्ट तक आप से लड़ूँगी। आपका बच्चे पर कोई अधिकार नहीं है।"[84] पति पत्नी के अहं की टकराहट में पलाश का बाल मन आहत होता है। निष्क्रिय पलाश माता - पिता की परिस्थितियों की कठपुतली बन बैठता है। किंतु अंततः ममत्व की आड़ में वीणा नरम पड़ती दिखती है, जब वह प्रकाश से पूछती है कि पलाश के लिए कैसा कोट बनवाना होगा और किस रंग का बनवाना होगा | एक बच्चे को माता - पिता दोनों से लाड़ - दुलार की अपेक्षा रहती है, ऐसे में यदि वह एक ओर से भी कट जाता है, तो उसका अपूर्ण व्यक्तित्व ही सामने आता है | इसी प्रकार निर्मल वर्मा की कहानी 'एक दिन का मेहमान' में माता पिता के पारस्परिक अहम के कारण पुत्री को ऐसे संस्कार मिले जिसके तहत वह अपने पिता को घर में एक दिन से अधिक बर्दाश्त नहीं कर पाती है । इस कहानी में, दाम्पत्य जीवन में किसी तरह के समझौते को न स्वीकारने में माँ की स्वाभिमानी वृत्ति थी | वह समझौता करती भी क्यों ? कौन सी पत्नी परस्त्रीगामी पति को सहज स्वीकारेगी ? अतः "यू आर कमिंग एंड गोइंग मैन, वह उससे कहा करती थी, पहले विषाद में और बाद में कुछ हँसी में।"[85] सुप्रीम कोर्ट के हालिया फ़ैसले के प्रकाश

---

[82] मोहन राकेश,एक और ज़िंदगी,hindisamay.com

[83] मोहन राकेश,एक और जिंदगी,hindisamay.com

[84] मोहन राकेश,एक और जिंदगी,hindisamay.com

[85] मोहन राकेश,एक और जिंदगी,hindisamay.com

में अगर इस कहानी को देखा जाए तो, परिस्थितियां और साफ़ - साफ़ नज़र आएंगी। संविधान के अनुच्छेद 497 में परिवर्तन कर विवाहेत्तर संबंधों को क़ानूनी रूप से एक तरह से प्रशिक्षण दिया जा रहा है | पुरुष की अवैध संबंधों से उपजी संतान की जो हालत हो रही है, उससे समाज अनभिज्ञ नहीं है | पुरुष के परस्त्रीगमन से या पुरुष के अवैध संबंधों से उपजी संतान का दंश उस पुरुष को नहीं वरण उस स्त्री और उस नन्ही पीढ़ी को भुगतना पड़ता है | जब हमारा पितृसत्तात्मक समाज इस तरह के बच्चे से (अवैध संबंध से उपजी संतान के) उनके पिता की पहचान जानना चाहता है तब परिस्थितियाँ और भयावह हो जाती है। सुप्रीम कोर्ट ने नारी सशक्तिकरण के चश्मे से देखते हुए पुरुष के परस्त्री - गमन की तरह स्त्री के परपुरुष - गमन को भी सामाजिक मान्यता दी, जिसके परिणामस्वरूप सामाजिक समानता या लैंगिक समानता आए या न आए लेकिन एक नन्ही पीढ़ी की बाढ़ आ जाएगी, जिसके सामने अभिभावकीय प्रश्न खड़ा हो सकता है। क्योंकि हमारा समाज आज भी किसी बच्चे से उसके सामाजिक पहचान हेतु उसकी माँ का नाम नहीं, अपितु उसके पिता का नाम पूछता है। ऐसे पितृसत्तात्मक समाज में परपुरुष गामी स्त्री की संतान के समक्ष 'अभिभावकीय संकट' एक गंभीर समस्या के रूप में उभरकर आ सकती है ! वहीं परपुरुषगामी माता या परस्त्रीगामी पिता के बारे में जानने के बाद, एक बच्चे के सामान्य मानसिक विकास का बाधित होना स्वाभाविक है। क्योंकि एक बच्चा अपने पिता या अपनी माता के अवैध संबंधों के बारे में जानकर सामान्य प्रतिक्रिया नहीं दे सकता और अगर वह सामान्य प्रतिक्रिया देने को तैयार हो भी जाए तो, यह समाज उसे सामान्य नहीं रहने देगा। संभावना तो यह भी है कि पति के परस्त्री गामी होने की सूचना मिलते ही पत्नी अपने पति के प्रति स्वाभाविक न हो पाए और वह इसकी

प्रतिक्रिया अपने हाव - भाव एंव दिनचर्या में व्यक्त करे। ऐसे में एक बच्चा अपनी माँ से अपने पिता के प्रति व्यवहार के संदर्भ में क्या सीखेगा ? बच्चे अपने बड़ों को घर में जो करते हुए देखता है उसी का अनुकरण करते हैं। जब वह बालक अपनी माता को अपने पिता के प्रति निष्ठुर होते हुए देखेगा तो, वह भी उसी तरह व्यवहार करना सीखेगा। 'एक दिन का मेहमान' कहानी में बेटी पिता के प्रति "फॉर्मल" रवैया अपनाती है | अपने पिता को एक सामान्य व्यक्ति के रूप में चिन्हित करती है और उससे पिता के संबंध के नाते नहीं मिलती है | यह प्रसंग संकेत करता है कि एक समय ऐसा आएगा कि इस तरह के विवाहेतर संबंधों से उपजी संतानों के लिए एक अलग से विमर्श की ज़रूरत आन पड़ेगी। अतः अगर 'एक दिन का मेहमान' कहानी में बच्ची अपने पिता के साथ अनजान रवैया अपनाती है | इसमें कोई दो राय नहीं है कि भविष्य में हमारे समाज के बच्चे जिनके सामने माता - पिता के पहचान का संकट होगा, वे बच्चे शायद अपने माता - पिता के साथ यही रवैया अपनाए | माता - पिता को बच्चों से इस व्यवहार की अपेक्षा नहीं रहती | 'एक दिन का मेहमान' कहानी में पिता, पुत्री के व्यवहार में आए परिवर्तन एवं पत्नी की शिकायत भरी काँपती आवाज़ सुनकर सोचने पर विवश हो जाता है | पत्नी कहती है - "जिस दिन से अलग हो जाते हैं मरते नहीं, एक दूसरी ज़िंदगी जीने लगते हैं जो धीरे - धीरे उस ज़िंदगी का गला घोंट देती है, जो तुमने साथ गुज़ारी थी।" पत्नी के मुह से यह सब सुनकर पति हतप्रभ रह जाता है | इस एकांगी जीवन का परिणाम यह होता है कि बेटी अपने पिता से पूछती है "आप रात को कहाँ रहेंगे ?...यहाँ दो तीन अच्छे होटेल भी है। मैं अभी फ़ोन करके पूछ लेती हूँ।"[86] पुत्री के लिए पिता मात्र एक दिन का मेहमान है,

---

[86] निर्मल वर्मा,एक दिन का मेहमान,hindisamay.com

जिसके लिए उसके घर में एक दिन से ज़्यादा की जगह नहीं है। एक साधारण बच्चे का मानसिक विकास कहीं से भी उसे ये रवैया अख़्तियार करने पर मजबूर नहीं कर सकता कि वो अपने पिता से अनजान व्यक्ति की तरह वार्तालाप करे ! किंतु एक दिन का मेहमान कहानी की बच्ची की मानसिकता उसके परिवेश की निर्मिति है, तभी वह अपने पिता से यंत्रवत व्यवहार करती है। इस प्रकार माता - पिता आपसी अनबन में बच्चों को हथियार के रूप में प्रयोग करने लगते हैं, ऐसे में वह जब अपने सेतु होने का दायित्व नहीं निभा पाते हैं, तो 'बंटी' की तरह निकाल कर फेंक दिए जाते हैं।

हिंदी साहित्य में विवाह विच्छेद से संबंधित कहानियों की भरमार है जहाँ नवजात शिशुओं से लेकर किशोर वय तक के बच्चों को विवाह विच्छेद की पीड़ा का दंश झेलते हुए दर्शाया गया है | चाहे वह प्रेमचंद के 'मिस पद्मा' का नवजात शिशु हो या कमलेश्वर की 'राजा निरबंसिया' कहानी का नवजात शिशु। जब 'जगपति' को अपनी पत्नी 'चंदा' और 'बच्चन सिंह' के अवैध संबंध का संदेह होता है, तब वह इसी संदेहवश अपनी गर्भवती पत्नी 'चंदा' को मायके भेज देता है और उसे कभी बुलाने की हिम्मत नहीं जुटा पाता है। वह इसी संशय में रह जाता है कि- जगपति और चंदा के बीच अवैध संबंध है। अवैध संबंध के संशय में ही जगपति सोचता है "वह कुछ और जनती आदमी का बच्चा न जानती। वह और कुछ भी जानती कंकड़ - पत्थर ! वह नारी ना बनती, बच्ची ही बनी रहती।"[87] विवाहेत्तर संबंधों की शंका ने जगपति को आत्महत्या करने पर मजबूर कर दिया। जिस रात चंदा ने बच्चे को जना "उसी रात को जगपति अपना सारा कारोबार त्याग, अफ़ीम और तेल पीकर मर गया क्योंकि चंदा के पास कोई दैवीय शक्ति नहीं

[87] कमलेश्वर,राजनिरबंसिया,hindisamay.com

थी”[88] जिससे वह सीता की तरह अपनी पवित्रता की परीक्षा देकर स्वयं को पवित्र साबित कर पाती | जाते - जाते जगपति ने चंदा के नाम एक पत्र छोड़ दिया जिसमें उसने लिखा “चंदा मेरी अंतिम इच्छा है कि तुम बच्चे को लेकर चली आना...आग बच्चे से दिलवाना ।”[89] पिता की मृत्यु और माता की त्रासदी के बाद नवजात शिशु की वर्तमान दशा और भविष्य में उसकी दिशा चिंताजनक है । न जाने कितने वैवाहिक दम्पति इसी संशय व शंका में आत्महत्या, हिंसा एवं विवाह विच्छेद के शिकार हो रहे हैं | पति - पत्नी के बिगड़े दांपत्य में बच्चे अधकचरे संबंधों की मार झेलते है | जबतक वह बालक सेतु होने का दायित्व निभा पाता है, तब तक उसका बचपन बचा रहता हैं, किन्तु जब वह इस दायित्व के निर्वहन में चूक जाता है तब उसे दूध से मक्खी की तरह निकालकर फेंक दिया जाता है |

3.4 एकल परिवार में बालक :

परिवार हमारे समाज की पहली सामूहिक इकाई है किन्तु बाज़ारवाद, अस्तित्ववाद, आधुनिकता, और भौतिकता की दौड़ में आज परिवार व्यवस्था अपने मूल से इतर क्रमश: छोटी होती चली जा रही है । आने वाले समय में समाज की इस इकाई का स्वरूप क्या होगा, कह पाना मुश्किल है । दुनिया के प्रत्येक समाज ने परिवार के महत्व को स्वीकारा है, भले ही भौगोलिकता ने इसके स्वरूप को प्रभावित किया हो । उत्तर आधुनिकता की गोद से जन्में अस्तित्ववाद, व्यक्तिवाद, सबाल्टर्न इत्यादि ने समाज में सकारात्मक भूमिका निभाई किंतु इन विमर्शों का परिवार व्यवस्था पर अहंवादी प्रभाव

---

[88] कमलेश्वर,राजा निरबंसिया,hindisamay.com

[89] कमलेश्वर,राजा निरबंसिया,hindisamay.com

भी पड़ा | परिणामस्वरूप संयुक्त परिवार व्यवस्था को एकल परिवार ने स्थानांतरित किया । यह स्थानांतरण एक स्वस्थ मनुष्य पर जब नकारात्मक व जटिल प्रभाव डाल सकता है तो, परिवार का सबसे छोटा सदस्य - एक बच्चा कैसे इसके दंश से अछूता रह सकता है। सबाल्टर्न ने स्त्री विमर्श को जो दृढ़ता प्रदान की उसी का परिणाम है कि गांव में घूँघट काढ़ने वाली महिलाएं आज डॉक्टर, इंजीनियर के रूप में स्वयं को स्थापित कर रही हैं। स्त्री अस्मिता की तलाश ने उसे अर्थसत्ता के क़रीब तो पहुँचा दिया किंतु, इसके एवज़ में पितृसत्ता ने उस पर "नौकरी : परिवार" का फ़ॉर्मूला थमा दिया। पुरुष ने सदियों पहले भी बच्चे के लालन - पालन से हाथ खींच लिए थे और आज भी लगभग यही स्थिति बनी हुई है। आधुनिकता ने जब पितृसत्ता के औज़ारों पर प्रहार किया तो, पितृसत्ता ने शोषण के उन औज़ारों पर आधुनिकता का लेबल चस्पा कर 'स्मार्ट मॉम' की स्कीम लॉन्च कर दी। क्या एक महिला तभी स्मार्ट हो सकती है जब वह बच्चे की परवरिश और नौकरी में संतुलन बना सके ! पिता ने क्यों स्वयं को इस संतुलन की परिधि में रखा ? क्यों उसने स्वयं को बच्चे की परवरिश में निष्क्रिय रखा। जब बच्चे पर 'पिता के नाम का लेबल चस्पाना ज़रूरी' है फिर तो, पिता की सकारात्मक ज़िम्मेदारी और बढ़ जानी चाहिए। पितृसत्ता ने इस ओर कभी उंगली नहीं उठाई । अधिकारों की लड़ाई के क्रम में सामाजिक दंश माता और बालक को ही क्यों झेलना पड़ा ? एकल परिवार में माँ जहाँ दोहरा भार वहन करती है, वहीं इस रस्साकशी में बालक का सहज मनोवैज्ञानिक विकास नहीं हो पाता |

पारिवारिक टूटन के क्रम में बाल मन सर्वाधिक प्रभावित होता है। संयुक्त परिवार में तमाम रिश्ते और हर उम्र के लोग होते हैं जबकि, एकल परिवार में माता - पिता और

संतान के अलावा शायद ही वृद्धों का अस्तित्व स्वीकारा जाता है। शहर में बच्चे को माँ - बाप के साथ छोटे से दरबानुमा मकान में क़ैद रहना पड़ता है। अतएव 'फ़्लैट - कल्चर' के कारण बच्चे आत्मकेन्द्रित व अंतर्मुखी होते चले जा रहे हैं। बच्चों के स्वाभाविक विकास में माता -पिता, दादा - दादी, चाचा - चाची, नाना - नानी, ऐसे अनेक रिश्ते महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। माँ की लोरियां उसे सिर्फ़ सुलाती ही नहीं है अपितु उसके भीतर सुनने और ध्यान देने की क्षमता का विकास करती है। दूसरी ओर माता - पिता, दादा - दादी, नाना - नानी द्वारा सुनाई गई कहानियों से नैतिक - चारित्रिक विकास के साथ मानवीय मूल्यों की नींव भी डलती है। संयुक्त परिवार में बच्चा घर के प्रत्येक सदस्य से व्यवहार कुशलता सीखता है। बच्चे नक़ल द्वारा बहुत कुछ सीखते हैं, अतः बालक अपने से बड़े को देखकर, सुनकर उनके नक़्शेक़दम पर चलना चाहता है। अतएव बालक संयुक्त परिवार में रहकर समाज में नाना प्रकार की भूमिका निभाना सीखता है। उत्तर आधुनिक विमर्श - पूर्व समाज लगभग संयुक्त परिवार से भरा पूरा था, किन्तु नब्बे के दशक में भूमंडलीकरण एवं बाज़ारवादी संस्कृति की दस्तक ने पारिवारिक टूटन को प्रश्रय दिया, जिसकी अनुगूंज हिंदी कथा साहित्य में भी सुनाई पड़ने लगी। हिंदी कथा साहित्य में ऐसे बालकों को केंद्र में रखकर अनेक कहानियां लिखी गई। लेखिका चित्रा मुद्गल ने इसी एकल परिवार के संत्रास को केंद्र में रखकर 'गेंद' कहानी लिखी है। इस कहानी के केंद्र में एक छोटा बच्चा और एक बूढ़ा (सचदेवा जी) है। दरबानुमा फ़्लैट में अपनी माँ के साथ रहने वाला बच्चा सामाजिकता से पूरी तरह कट चुका होता है। घर की खिड़की से झांकता बच्चा बाहर सबके साथ खेलना चाहता है। एकल परिवार में सदस्यों के अभाव ने उसे अंतर्मुखी बना दिया है। वहीं कहानी के दूसरे प्रमुख पात्र

'सचदेवा जी' संयुक्त परिवार की टूटन का परिणाम वृद्धाश्रम में झेल रहे हैं। पारिवारिक - भावनात्मक धरातल पर अकेलेपन की मार झेल रहे ये दोनों पात्र एकल परिवार की त्रासदी को रेखांकित करते हैं। प्रत्येक दिन वह बच्चा अकेले घर में गेंद से खेलता है और जब उसकी बॉल घर से बाहर चली जाती है तो वह 'सचदेव जी' को आवाज़ लगाता है "अंकल...ओ अंकल ! ...प्लीज़ सुनिए न अंकल...!"[90] परिणामस्वरूप सचदेवा जी कहते हैं गेट का "ताला खुलवा लो मम्मी से !"[91] इसके प्रत्युत्तर में बच्चा कहता है "बद्धिराम गाँव गया है। घर पे मैं अकेला हूँ। मम्मी बाहर से बंद करके गई है।"[92] जिस परिवार में मात्र दो सदस्य (माँ और बच्चा) हो, उस परिवार में बच्चा क़ैदी के समतुल्य जीवन व्यतीत करता है। घर में क़ैद बच्चे के लिए घर से बाहर आकर खेलना स्वप्न समान है। अतः बूढ़े सचदेवा जी के पूछने पर (अकेले खेल रहे हो ?) बच्चा कहता है "अकेले...मम्मी किसी बच्चे के साथ खेलने नहीं देती।...बोलती है बिगड़ जाओगे। यहाँ के बच्चे जंगली है।"[93] करियरिस्ट माँ अपने बच्चे को पर्याप्त समय नहीं दे पा रही है और साथ ही उसे यह भी मंज़ूर नहीं की बच्चा इस भावनात्मक कमी की पूर्ति हेतु समाजोन्मुख हो। बच्चा जब तक अपने परिवेश में घुलना - मिलना नहीं सीखेगा, बच्चों के साथ नहीं खेलेगा तब तक वह सामाजिक धरातल पर संवाद कला से वंचित रहेगा। परिणामस्वरूप वह बच्चा विक्षिप्त या कुंठित वयस्क के रूप में ही उभर कर सामने आएगा। दूसरी ओर वृद्धाश्रम में जीवन व्यतीत कर रहे सचदेवा जी जब भी उस बच्चे को

---

[90] https://www.sahityashilp.com/2009/06/blog-post22.html?m=1

[91] https://www.sahityashilp.com/2009/06/blog-post22.html?m=1

[92] https://www.sahityashilp.com/2009/06/blog-post22.html?m=1

[93] https://www.sahityashilp.com/2009/06/blog-post22.html?m=1

देखते हैं भावनात्मक स्तर पर कमज़ोर होते दिख पड़ते हैं, भावविह्ल हो जाते हैं। अंततः सचदेवा जी उस बच्चे से कहते हैं, "चलो मुझे दादा जी पुकारा करो। पुकारोगे न ? सहसा उनका गला भर्रा आया।"[94] सचदेवा जी को अपने भावनात्मक कमी की पूर्ति उस नन्हें बालक में दिखती है और उस बालक को खेल का साथी भी मिलता दिख पड़ता है, जो उसके अकेलेपन का साथी भी हो सकता है।

करियरिस्ट माँ के अंतर्मुखी बालक और संतान द्वारा त्याग दिए गए सचदेवा जी के मर्म को व्याख्यायित करती ये कहानी एकल परिवार के भुक्तभोगी पात्रों के मर्म को उजागर करती है। वर्तमान सामाजिक व्यवस्था इस तरह की घटनाओं की अभ्यस्त हो चुकी है, जहाँ बच्चे की सामाजिक सुरक्षा के नाम पर उसे सामाजिकता से काट दिया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप बच्चे अंतर्मुखी, तनावग्रस्त व मनोरोगों के शिकार हो जाते हैं|

3.5 अवैध संबंधों से उपजी संतान :

किसी कार्य की वैधता का अर्थ है कि वह विधि के असंगत है। वैधता में बाध्यता का समावेश होता है | पुरुष और संतान का संबंध या पुत्र और माता का संबंध, पुरुष और स्त्री के संबंध पर आधारित होता है जिनसे उसे संतान की उत्पत्ति होती है। लगभग सभी पद्धतियों में विवाह प्रामाणिक व्यवस्था है और उसे नैतिक तथा विधिक अनुमोदन प्राप्त है। अवैधता ठीक इसके विपरीत है | विवाह पूर्व की संतानोत्पत्ति अनुमोदित नहीं होती और संतान को उत्तराधिकार से वंचित करने वाली माता निंदा की वस्तु मानी जाती है|

---

[94] https://www.sahityashilp.com/2009/06/blog-post22.html?m=1

सभ्यता के विकास क्रम में ही समाज ने विवाह को वैध ठहराया और इस वैवाहिक वैधता ने समाज की सोच को कालांतर में जड़ कर दिया कि अविवाहित जोड़े की संतान सदैव सामाजिक उपेक्षा की पात्र ही रहेंगी। इसी सामाजिक उपेक्षा के भय से 'कबीर' को उनकी माँ ने त्यागा दिया था। सामाजिक उपेक्षा का भय कल भी था, और आज भी है। अवैध संबंधों से उपजी संतान सामाजिक स्तर पर उपेक्षित होने के कारण हीन ग्रंथि के शिकार हो जाते हैं और उनका जीवन त्रासद परिस्थितियों में कटता है एवं इस हीन ग्रंथि के शिकार बालक अपराधी मनोवृत्ति की ओर बहुत जल्द प्रवृत्त होते हैं। अवैध संबंधों से उपजी संतान आधुनिकता का परिणाम नहीं है, चूंकि भारतीय मिथकीय - दंतकथाओं में भी स्त्री - पुरुष के अवैध संबंधों का चित्रण है। सभ्यता के आरंभिक दौर में विवाह नामक संस्था का अस्तित्व ही नहीं था यह मानव निर्मित संस्था है, जिसे सभ्यता के विकास क्रम में संस्कृति का चोला पहनाया गया | सभ्यता का दंभ भरने वाले सामाजिक एवं धार्मिक ठेकेदारों ने मनुष्य की सहज प्राकृतिक आवश्यकता को एक संस्था विशेष से जोड़कर उसकी वैधता - अवैधता का प्रमाण पत्र देना शुरू कर दिया। धार्मिक ठेकेदारों ने तो 'मरियम' के गर्भवती होने के पीछे ईश्वरीय शक्ति को ज़िम्मेदार ठहराया। क्या वैज्ञानिक दृष्टिकोण इस कुतर्क को हज़म कर पाने में समर्थ है ? क्या आधुनिक समाज आज भी धर्म के नाम पर यह मान लेगा कि एक स्त्री ने ईश्वरीय शक्ति से गर्भ धारण किया ! अत्याधुनिक समाज एक ओर जहाँ 'सरोगेसी' तकनीक तक पहुँच चुकी है, वहीं दूसरी ओर वही समाज 'मरियम' के गर्भवती होने के पीछे 'मरियम - जॉसेफ' के प्रेम संबंध को मान्यता नहीं दे सकता है ! विवाह पश्चात पत्नी पर अपनी भोगवादिता को थोपना वैध है, किंतु प्रेम - प्रसंग के परिणामस्वरूप उत्पन्न संतान अवैध है ! धर्म और

सभ्यता के ठेकेदारों ने 'बाइबिल' रचकर साक्ष्य प्रस्तुत कर दिया कि मरियम ने 'येसु ख्रीस्त' को जन्म दिया है, तो वह अपवित्र नहीं है। 'मरियम' को चारित्रिक स्खलन से बचाने के लिए पूरा धार्मिक तंत्र खड़ा था। अतः मरियम को पवित्रता के खांचे में फ़िट करने के लिए मन गढ़ंत धार्मिक लेप चढ़ा दिया गया। उनका शुद्धिकरण इसलिए हुआ क्योंकि वह ईसा मसीह की माँ थी, किंतु आज किसी अवैध संतान और उसकी माँ का शुद्धिकरण करने कौन मसीहा आएगा ?

अवैध संबंधों से उपजी संतान कल भी सामाजिक अस्तित्व में थी और आज भी है। हाँ, इसके अनुपात में अंतर ज़रूर रहा है। वर्तमान समय में व्यक्तिस्वातंत्र्य, लिभइन, फ़्री - सेक्स एवं वन नाइट स्टैंड जैसी तमाम अवधारणाएँ परंपरागत विवाह संस्था के विपरीत आ खड़ी हुई है, जो विवाह पर धार्मिक नियंत्रण और कठमुल्लेपन का पुरज़ोर विरोधी है। किन्तु यह भी सच है कि इन धारणाओं ने कहीं न कहीं अवैध संतान या अनचाहे संतान के अनुपात में उत्तरोतर वृद्धि की है | अवैध सम्बन्धों से उपजी संतान ने लगभग पचास के दशक में ही हिंदी कहानी के द्वार पर दस्तक देना शुरू कर दिया था। मनोवैज्ञानिक तंतुओं का विश्लेषण करते हुए जैनेन्द्र ने 'दिल्ली में' नमक कहानी में अवैध संबंधों से उपजी संतान और माँ के त्रासद अंत को रेखांकित किया है। इस ('दिल्ली में') कहानी में एक दंपति द्वारा उस बच्चे को गोद लिया जाता है जो सामाजिक वैधता के पैमाने पर खरा नहीं उतरता। लोक - लाज के कारण जिस प्रकार कबीर की माँ नें उन्हें त्याग दिया था ठीक उसी प्रकार 'पतिया' ने अपने बेटे को त्याग दिया, किन्तु संतान का मोह कहाँ छूट पाता है ! संतान मोह में 'पतिया' उस दंपति के यहाँ झाड़ू - पोछा करती है, जिसने उसके बच्चे को गोद लिया है। काम की आड़ में 'पतिया' अपने मातृत्व को संतुष्ट करना

चाहती है । "पतिया बच्चे को लाड़ करने, पुचकारने, खिलाने और बनाने सवाँरने से संतुष्ट नहीं है। वह मानो और भी कुछ ज़्यादा चाहती है। वह मानो उस पर अपना संपूर्ण अधिपत्य चाहती है, जिसमें किसी का साझा न हो।"[95] एक माँ कैसे अपनी संतान को बाँट सकती है ? 'पतिया' अपने बच्चे को बंटता देख नहीं पाती है। क्या कभी कोई पिता अपने अवैध संतान के लिए इतना त्याग कर सकता है ? क्या हमारा समाज उस लम्पट पुरुष से भी संतान की अवैधता पर सवाल दाग़ता है ? शायद नहीं ! क्योंकि हमारा समाज पुरुष को उच्च श्रृंखलता का एकाधिकार दे चुका है। पुरुष के लिए 'सात ख़ून माफ़' है। स्त्री के आत्मसम्मान, देह एवं अस्तित्व के साथ खिलवाड़ कर भी वह प्रतिष्ठित है। तभी तो महादेवी वर्मा 'लक्ष्मा' कहानी में लिखती हैं "एक पुरुष के प्रति अन्याय की कल्पना से ही सारा पुरुष समाज उस स्त्री से प्रतिशोध लेने को उतारू हो जाता है और एक स्त्री के साथ क्रूरतम अन्याय का प्रमाण पाकर भी सब स्त्रियां उसके अकारण दंड को अधिक भारी बनाए बिना नहीं रहती । इस तरह पग - पग पर पुरुष से सहायता की याचना न करने वाली स्त्री की स्थिति कुछ विचित्र सी है। वह जितनी ही पहुँच के बाहर होती है, पुरुष उतना ही झुंझलाता है और प्रायः यह झुँझलाहट मिथ्या अभियोगों के रूप में परिवर्ति हो जाता है।"[96] इस क्रूर पितृसत्ता ने न तो 'पतिया' को प्रेम करने का अधिकार दिया और न ही उसके प्रेमी ने उससे प्रेम किया | तभी तो 'पतिया' को अपने संतान का त्याग करना पड़ा। हमारा समाज कहीं से भी एक स्त्री को स्वतंत्रता देने के पक्ष में नहीं है । आज से लगभग चार सौ वर्ष पूर्व मुड़ कर देखें तो, 'तुलसीदास' भी

[95] निर्मला जैन, जैनेन्द्र रचनावली खंड 3, भारतीय ज्ञानपीठ, पृष्ठ संख्या 57

[96] https://feminisminindia.com/2017/03/05/Mahadevi-verma-easy-hindi/

मध्यलीन स्त्रीबोध का परिचय देते हुए कह गए 'जिमि सुतंत्र भएं बिगरहि नारी'। तुलसीदास भी नारी स्वतंत्रता को नारी चरित्र के लिए घातक बता गए। क्या उन्होंने पुरुष स्वतंत्रता के लिए इसके समतुल्य ऐसा कुछ कहा है ? शायद नहीं है ! आज से चार सौ साल पहले एक कवि अपनी कविताई में भी अपने भीतर के पितृसत्ता से मुक्त नहीं हो पाया तो, व्यावहारिक धरातल पर इस समाज से कोई उम्मीद करना ही व्यर्थ है | समकालीन कविता के हस्ताक्षर 'आलोक धन्वा' कहते हैं "मैं जनता हूँ / कुलीनता की हिंसा |"[97] कवि पितृसत्ता के नारी पराधीनता विषयक विचार पर प्रहार करते हुए लिखते हैं "वह कहीं भी हो सकती है / गिर सकती है / बिखर सकती है / लेकिन वह ख़ुद शामिल होगी सब में / गलतियाँ भी ख़ुद ही करेगी / सब कुछ देखेगी शुरू से अंत तक / अपना अंत भी देखती हुई जाएगी / किसी दूसरे की मृत्यु नहीं मरेगी |"[98] एक लोकतांत्रिक कवि पितृसत्ता के हिंसा की परत दर परत पड़ताल करता हैं तो वहीं एक परंपरावादी कवि कुलीन पुरुष की कारतानियों पर पर्दा डालने हेतु नारी पर दोषारोपण करता है। 'दिल्ली में' कहानी की नायिका 'पतिया' पर भी यही दोषारोपण किया गया, उसे भी एक स्त्री होने के नाते जीवन के महत्वपूर्ण निर्णय लेने से रोका गया। किन्तु 'पतिया' आलोक धन्वा की वह 'भागी हुई लड़की' है जो गिरती है, उठती है, गलतियां करती है और अपना अंत भी देखती है। कहानीकार अपने शब्दों में 'पतिया' के अंत को इस प्रकार रेखांकित करते हैं "...उसने लड़के को गंगा में फेंक दिया और पल भर में आप भी छलाँग मार गयी। बरसात की गंगा जोरों पर थी, कोई बच न सका। उन दोनों को माँ

---

[97] https://kavitakosh.org/kk/भागी_हुई लड़की/_आलोक_धन्वा

[98] https://kavitakosh.org/kk/भागी_हुई लड़की/_आलोक_धन्वा

गंगा ही अपने पेट में आत्मसात कर गई।"[99] कहानी में अविवाहित माँ और संतान की दुर्दशा कल्पनातीत नहीं वरन् हमारे समाज की कड़वी सच्चाई है। हालाँकि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पिछले कुछ वर्षों में लिए गए फ़ैसले अविवाहित माँ और उसकी संतति को सामाजिक न्याय दिलाने की एक सार्थक पहल है। किंतु यह भी सच है कि जब तक हमारा समाज इन मान्यताओं के संदर्भ में लचीला नहीं होगा, तब तक बच्चों का असहज मनोवैज्ञानिक विकास ही हो पाएग।

अतएव दाम्पत्य जीवन के संदर्भ में बाल जीवन के विविध आयाम उभर कर सामने आते हैं। अधकचरे दांपत्य को संतुलित करने के क्रम में बच्चे माता - पिता के भौतिक उपस्थिति मात्र का ही अनुभव कर पाते हैं, उनकी भावनात्मक उपस्थिति से वंचित रह जाते हैं। पति - पत्नी के दाम्पत्य जीवन की सकारात्मकता और नकारात्मकता का सीधा - सीधा प्रभाव उनकी संतान पर पड़ता है। विवाह विच्छेद, अविवाहित प्रेम संबंध, एकल परिवार की टूटन एवं विवाहेतर संबंधों का सर्वाधिक दुष्परिणाम यदि कोई झेलता है तो वह नन्ही पीढ़ी ही है। पति - पत्नी के अहं की टकराहट में बच्चे को माता या पिता दोनों में से किसी एक के प्रेम से वंचित रहना पड़ता है। अविवाहित प्रेम संबंध से उपजी संतान की त्रासदी तो और भी भयावह है, उनके जीवन में पिता नामक प्राणी का कोई अस्तित्व ही नहीं रहता है क्योंकि प्रेम संबंधों से उपजी संतति के संदर्भ में लगभग ऐसा ही होता है कि लम्पट पुरूष इस संबंध में अपनी ज़िम्मेदारी निभाने से हाथ खींच लेता है। वहीं एकल परिवार की टूटन का भुक्तभोगी बालक अंतर्मुखी हो जाता है, जिसके परिणामस्वरूप बालक के व्यक्तित्व का स्वाभाविक विकास अवरुद्ध हो जाता है।

---

[99] निर्मला जैन, जैनेन्द्र रचनावली खंड 3, भारतीय ज्ञानपीठ, पृष्ठ 60

चतुर्थ अध्याय

भूमंडलीकरण एवं बाजारवाद के सन्दर्भ में बाल - पात्र

4.1 भूमंडलीकरण और बाज़ारवाद का परिचय :

ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार 'भूमंडल' या 'ग्लोब' शब्द लगभग 400 वर्ष पुराना है किंतु 'ग्लोबलाइज़ेशन' शब्द का प्रयोग 1960 के पहले नहीं मिलता है । वेबस्टर डिक्शनरी में 1961 में पहली बार इसको परिभाषित किया गया है । अमेरिका के साप्ताहिक पत्रिका 'इकोनॉमिस्ट' में 4 अप्रैल 1959 के अंक में 'ग्लोबलाइज्ड' कोटा का जिक्र सर्वप्रथम किया गया। इस घटना के 25 वर्ष बाद अमेरिकी शैक्षिक संस्थानों में इसका प्रयोग आरंभ हुआ। आज शब्दकोश में इसका यह अर्थ है कि ऐसा कोई भी कार्य जिसका प्रभाव संपूर्ण विश्व को अपनी चपेट में ले लेता हो, भूमंडलीकरण है । एंथोनी गिड्डेंस अपनी पुस्तक 'द कंसीक्वेंस ऑफ मॉडर्निटी' में लिखा है कि "भूमंडलीकरण का अर्थ विश्व भर के सामाजिक संबंधों को इतना प्रचंड बना देना है कि दूर - दराज़ के क्षेत्रों में जो कुछ भी स्थानीय स्तर पर घटता हो उसे हज़ारों मील दूर घटने वाली घटनाएँ तय करें"।[100] भूमंडलीकरण का अर्थ संपूर्ण भूमंडल का एकीकरण करना है । अर्थात् भूमंडलीकरण का उद्देश्य है मानव कल्याण हेतु भूमंडल को एक विश्वग्राम में परिवर्तित कर देना। "भूमंडलीकरण का शाब्दिक तात्पर्य हमारे 'वासुदेव कुटुंबकम' की धारणा के अनुकूल ही है जिसमें विश्व मानवता के कल्याण की कामना निहित है।"[101] किंतु आज के संदर्भ में भूमंडलीकरण कहीं से भी कल्याणकारी कार्य से संबंधित नहीं है । जबसे वैश्वीकरण में कल्याण शब्द को बाज़ारवाद शब्द से स्थानांतरित कर, बाज़ारवाद को वरीयता दी है तभी से भूमंडलीकरण ने नकारात्मक छाप छोड़ना आरंभ कर दिया । भूमंडलीकरण ने हमारी इच्छा के विरुद्ध हम पर बाज़ार आरोपित किया, जिसका उद्देश्य मानव कल्याण नहीं अपितु धन कल्याण है। कुछ बड़े देशों और बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने

---

[100] http://www.apnimaati.com/2016/08/blog-post_54.html
[101] http://www.apnimaati.com/2016/08/blog-post_54.html

भूमंडलीकरण की कोख में बाज़ारवादी दत्तक पुत्र डाल दिया, जिससे कि इन बहुराष्ट्रीय विश्व शक्तियों को अपना स्वार्थ साधने में आसानी हो। भूमंडलीकरण की गोद से उत्पन्न बाज़ारवाद ने प्रत्येक देश को एक बाज़ार के रूप में चिन्हित किया और उस देश के प्रत्येक नागरिक को उपभोक्ता के रूप में। बाज़ारवाद ने इन देशों में जाकर ऐसी पैठ जमाई कि वे अपने पारंपरिक मूल्यों एवं श्रेष्ठ जीवन मूल्य क्षरित होते देख हतप्रभ रह गए। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें विश्व बाज़ार के मध्य पारस्परिक निर्भरता उत्पन्न होती है और व्यापार देश की सीमाओं में प्रतिबंधित न हो रहकर विश्व बाज़ार की दिशा में अग्रसर होता है। प्रभात पटनायक जैसे लोग इसे 'नव-साम्राज्यवाद' के रूप में चिन्हित करते हैं। वास्तव में यह पूंजीवाद का एकछत्र राज्य है। रजनी कोठारी के अनुसार, "भूमंडलीकरण से तात्पर्य शीत युद्ध के बाद उभरे नए किस्म के साम्राज्यवाद से है।"[102] उनका मानना है कि "यह एक अराजनैतिक प्रौद्योगिकी आधारित और राष्ट्र-राज्य को कमज़ोर करने वाला एक पूंजीवादी साम्राज्य है। वे इसे कॉरपोरेट पूंजीवाद की संज्ञा देते हैं। यह नव-साम्राज्यवाद अपने साथ उदारीकृत बाज़ार, अर्थ प्रणाली, विश्व बैंक, अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बाज़ार संगठन बहुराष्ट्रीय कंपनियां जी-8 जैसे मजबूत हथियारों को लेकर आया है।"[103]

इन हथियारों के बलबूते बाज़ार ने क्रूरता पूर्वक अपने पैर पसारे। जिसके परिणाम स्वरूप समाज के कई तबके हाशिए पर आ गए। इसमें गरीब, दलित, आदिवासी स्त्री, बच्चे इत्यादि तमाम हाशिए का समाज अनफिट व फालतू हो गया। इस संदर्भ में "एक विडंबना पूर्ण बात यह भी हुई कि भूमंडलीकरण ने पूंजी के पांव में पंख बांध दिए, वह तो लोकगीत की 'ललमुनिया' की तरह विश्व भर में फुदकने - चहकने को स्वतंत्र हो गई, 'उड़ी - उड़ी बैठी हलवैया दुकनिया और बर्फी के सब रस ले लिया रे-।"[104] किंतु बर्फी तो दूर सूखी रोटी भी इन मज़दूर सर्वहारा की पहुंच से दूर हो गई। बाज़ारवाद ने प्रत्येक वस्तु को उपभोग की दृष्टि से देखते हुए उसका एक निश्चित मूल्य तय किया। अतः बाज़ारवादी

[102] http://www.apnimaati.com/2016/08/blog-post_54.html
[103] http://www.apnimaati.com/2016/08/blog-post_54.html

[104] पितृ सत्ता के नए रूप, संपादक- राजेंद्र यादव, प्रभा खेतान, अभय कुमार दुबे, पृष्ठ सं-24, राजकमल प्रकाशन

दौर में सब कुछ उपभोग की वस्तु के रूप में देखा जाने लगा। मजदूरों को फ्री-वीज़ा नहीं मिला किंतु, "उनकी औरतें और लड़कियां अरब शेखों और दूसरे अंतर्राष्ट्रीय गिरोह के हाथ बिकती चली जाने को स्वतंत्र हो गईं...यह उस हृदयहीन उपयोगितावाद का ही नया रूप था जो औरत को 'पानी के गिलास' और 'लदे हुए एक गर्भ' के सिवा कुछ मानता ही नहीं था।"[105] अतः दोहरी, तेहरी न जाने कितनी सतहों पर बाज़ारवाद की मार झेलती औरतों ने इसी मन: स्थिति में एक बेटी, बहु, पत्नी एवं माँ जैसे अनेक किरदार निभाए। सर पर ईंट और पेट में 9 महीने का बच्चा लादे हुए बीच सड़क पर खड़ी मजदूरनी बाज़ार में औरत की दोहरी यंत्रणा की गाथा व्यक्त करती है। भूमंडलीकरण ने मात्र बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा उत्पाद ही नहीं बल्कि देश की संस्कृति का भी विस्तार किया। अपने पूंजी और प्रचार तंत्र के क्रम में इसने हमारे भीतर अपनी संस्कृति के प्रति हीन भावना पैदा किया और हम पर अपनी संस्कृति आरोपित की। यह एक प्रकार का सांस्कृतिक साम्राज्यवाद है। पश्चिम के विकसित देशों ने तृतीय विश्व के देशों में मुक्त बाज़ार के नाम पर लूट - खसूट की और उनका सांस्कृतिक पतन भी किया। हेनरी किसिंजर भूमंडलीकरण को अमेरिकीकरण का पर्याय समझते हैं। न्यूयॉर्क टाइम्स के एल. फिडमैन कहते हैं, "हम अमेरिकी गतिशील विश्व के समर्थक हैं और उच्च तकनीक के पुजारी हैं। हम अपने मूल्यों और पिज़्ज़ाहट दोनों का विस्तार चाहते हैं। हम चाहते हैं कि विश्व हमारे नेतृत्व में रहे और लोकतांत्रिक और पूंजीवादी बने प्रत्येक पात्र में वेबसाइट हो"[106] 'न्यूयॉर्क टाइम्स' में धड़ल्ले से इस प्रकार का वक्तव्य अमेरिका के साम्राज्यवादी मंशा की पोल खोल देता है। अमेरिका आर्थिक सफलता के बल पर विश्व संस्कृति का नाश कर संपूर्ण विश्व पर अमेरिकी सभ्यता का आधिपत्य चाहता है। बहुराष्ट्रीय अमेरिकी कंपनियों द्वारा लगातार सांस्कृतिक हीनता का बोध कराया जा रहा है जिसकी चपेट में लगभग तृतीय विश्व के सभी देश हैं। इस सांस्कृतिक हीनता बोध ने बाज़ार के कंधे पर बंदूक रखकर गोली चलाई है, जिससे सभ्यता के परखच्चे उड़ गए हैं । भूमंडलीकृत समाज का निर्माण अमेरिकी संस्कृति के प्रभाव वश हुआ है। अतः नया समाज नस्लवाद,

---

[105] पितृ सत्ता के नए रूप, संपादक- राजेंद्र यादव, प्रभा खेतान, अभय कुमार दुबे, पृष्ठ सं-24, राजकमल प्रकाशन

[106] A manifesto for the fast world- Thomas L. Fidman, 28 march 1999

जातिवाद और हिंसा का समाज है। मध्यकाल में अमेरिकी घरों में अफ्रीकी दासों की उपस्थिति अमेरिका के नस्लवादी होने का प्रमाण है। द्वितीय विश्वयुद्ध में परमाणु बम का प्रयोग एवं 2001 में गुरु सेठ कहकर धर्म युद्ध का एलान अमेरिका की मानवता विरोधी बर्बरता और हिंसक प्रवृत्ति का द्योतक है। जिस राष्ट्र की प्रवृत्ति मानवता विरोधी हो, वह राष्ट्र अपनी सांस्कृतिक साम्राज्यवाद के तहत इसी क्रूरता का वहन करेगी। अमेरिका ने अपनी क्रूरतम छवि को मानवाधिकार के चादर तले ढकने का चतुर प्रयास किया है जो कि वक्त - बेवक्त सरकता रहता है और अमेरिका की क्रूर छवि विश्व के समक्ष आती रहती है।

4.2 परिवार पर बाजारवाद का प्रभाव - बाज़ारवादी समाज में जी रहे मनुष्य में मानवता का नाश हो रहा है। भावनाएँ गौण और वस्तु पक्ष प्रमुख हो चुका है। चूंकि नया समाज भूमंडलीकरण की देन है और इसके मूल में 'टकाधन' संस्कृति ही प्रमुख है। अतः लाभ की लालसा ने सामाजिक सरोकार का अंतिम संस्कार कर दिया है। ऐसे में भूमंडलीकरण का विरोध मानव संहारक तत्वों के विरोध का पर्याय बन गया है। ऐसे क्रूर समाज के निर्माण से चिंतित होकर श्यामाचरण दुबे लिखते हैं, "समकालीन भारतीय समाज तीव्र संक्रमण के दौर से गुजर रहा है। परिवर्तन की आंधियां कई दिशाओं से आ रही है- एक ओर आधुनिकीकरण की अनिवार्यता है, दूसरी ओर परंपरा का आग्रह है। पश्चिम की आर्थिक और तकनीकी सहायता अपने साथ वहां की जीवन शैली और मूल्य ला रही है, जिन्हें अपनी जड़ से कटे भारतीय आधुनिकता समझकर बिना तर्क के अपना रहे हैं। इस अंधानुकरण ने एक नई चिंता को जन्म दिया है- अपनी अस्मिता और पहचान खोकर एक आकृति विहीन भीड़ की गुमनामी में खो जाने की।"[107] भारतीय संस्कृति के इस संक्रमणकालीन दौर में "न्यूक्लियर परिवार के इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन और न्यूट्रॉन (पति-पत्नी और बच्चे) अक्सर तीन दिशाओं में छिटके हुये से दिखते हैं जो अपने आप में बहुत बड़ा विस्फोट है। बच्चे छात्रावासों या डे केयर सेंटर्स में और अंततः सात समुंदर पार, माँ-बाप

---

[107] समय और संस्कृति, श्यामा चरण दुबे, पृष्ठ सं- 51, वाणी प्रकाशन

अलग-अलग नौकरियों पर बहुधा, अलग-अलग शहरों में। इससे भी जीवन की जटिलताएं बढ़ी है। मानसिक बीमारियां और स्वार्थपरता भी।"[108]

अतः इस भूमंडलीकरण के कारण पश्चिम ने जो पारिवारिक टूटन झेला उसी टूटन का दंश तृतीय विश्व के देश झेल रहे हैं। इस बाज़ारवादी सभ्यता ने संबंधों में भी उपयोगिता का सिद्धांत लागू कर दिया। जिसके परिणाम स्वरूप परिवार के वृद्ध सदस्य फालतू लगने लगे और परिवार का पर्याय पति - पत्नी और संतान हो गया। यह सिलसिला इतने पर ही नहीं रुका पति - पत्नी ने अब लिंग - परीक्षण करवा कर अपनी इच्छा अनुसार पुत्र व पुत्री की चाह व्यक्त की। इस वैज्ञानिक तकनीक ने भ्रूण - हत्या को इतना बढ़ावा दिया कि "अमर्त्य सेन के एक रिसर्च में यह देखा गया है कि 1986 में इसी भारत में तीन करोड़ सात लाख लड़कियां मिसिंग थी। यह जो लड़कियां गायब हो रही हैं यह अचानक नहीं घटा है। यह ज़माने से चला आता हुआ पुत्र - प्यास का इतिहास है।"[109] अतः हमारा पितृसत्तात्मक समाज सदैव पुत्र पिपासु रहा है। अतः पुत्र ही वंश का वाहक बन बैठा, ऐसे में परिवार में पल रही पुत्री पर कैसा प्रभाव पड़ेगा ? बच्चियों के बढ़ने के क्रम में जब वह अपने पिता से सुनती हैं कि उन्हें दूसरी संतान के रूप में पुत्र ही चाहिए तब उस बाल मन पर कैसा असर पड़ता होगा? समाज के प्रति, पिता के प्रति उसकी कैसी समझ विकसित होती होगी? ज़ाहिर सी बात है कि पुत्री अपने पिता से सामान्य व्यवहार करने में असहज महसूस करेगी। भ्रूण - हत्या एवं लिंग परीक्षण तकनीकी दुनिया में और सहज होता गया किंतु इस तकनीक ने जिस दर से स्त्री - पुरुष अनुपात में भिन्नता दर्ज की है, वह भयावह है। तस्लीमा नसरीन इसी संदर्भ में कहती हैं, "ऐसी स्थिति में निर्वाचन के लिए, शोषण के लिए, बलात्कार के लिए, हत्या करने के लिए पुरुषों के सामने कोई भी औरत नहीं बचेगी।"[110] क्योंकि बच्चियों को कोख में ही मार दिया जाएगा।

4.3 तकनीक और बाल जीवन -

---

[108] पितृ सत्ता के नए रूप, संपादक- राजेंद्र यादव, प्रभा खेतान, अभय कुमार दुबे, पृष्ठ सं-27, राजकमल प्रकाशन

[109] औरत का कोई देश नहीं, तसलीमा नसरीन, पृष्ठ सं-162, वाणी प्रकाशन

[110] तसलीमा नसरीन, औरत का कोई देश नहीं, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ सं-174

बाज़ारवाद ने अंतहीन खुलापन और उपभोग की जो संस्कृति विकसित की उसकी चपेट में बाल - जीवन आ चुका है। आधुनिक बाज़ार तकनीक से लैस है अतः अभिभावक अपनी सामाजिक 'एलिटनेस' को स्थापित करने के क्रम में बचपन से ही बच्चों को यंत्रों का आदि बना रहे हैं। जिसके कारण उनकी स्मृतिशक्ति क्षीण होती जा रही है। वह पड़ोस के मैदान में बच्चों के साथ खेलने के बजाय घर में टी.वी., मोबाइल, वीडियो गेम या कार्टून देखते हैं। 'व्हाट अबाउट द चिल्ड्रन' नामक चैरिटी संस्था ने यांत्रिक संजाल से घिरे बाल जीवन को स्वाभाविक विकास में बाधक बताते हुए अभिभावकों को सुझाव दिया है कि, "अभिभावकों को कम उम्र के बच्चों के साथ खुद रहना चाहिए ताकि वह बेहतर महसूस करे और इसी से उनके दिमाग का अच्छा विकास होता है"[111] वहीं दूसरी और बच्चों के शारीरिक क्रियाकलापों से दूरी व सामाजिक भागीदारी में उनकी नगण्यता को बच्चों के विकास में बाधक मानते हुए शेली गोड्डार्ड ब्लिथ कहती हैं, "सामाजिक बातचीत से शारीरिक विकास पर असर पड़ता है, आंखों से जब आप बच्चों से बात करते हैं, गाते हैं, नाचते हैं तो उसका असर होता है। यह सब कम हो रहा है क्योंकि बच्चों को अब चेयरों में बांधकर रखा जा रहा है और माएँ स्मार्ट फोन पर बतिया रही हैं।"[112] वहीं जैनेन्द्र ने बाल मनोविज्ञान को केंद्र में रखकर 'खेल' कहानी लिखी है, जिसमें भूमंडलीकरण पूर्व के समाज में बच्चे मिट्टी और बालू से खेलते नज़र आ रहे हैं। ग़ौरतलब है कि बाज़ारवाद ने जिस सभ्यता को जन्म दिया उसके विषैले प्रभाव ने बाल जीवन को पंगु बना दिया।

4.4 विज्ञापन में बढ़ती अश्लीलता और बालक-

वर्तमान समय में पूंजी ने अपनी आवाजाही के लिए सर्वाधिक सशक्त माध्यम के रूप में विज्ञापन को चुना है। पूंजी की सीमाहीन आवाजाही ने उपभोक्ता के सामने इतने विकल्प प्रस्तुत कर दिए हैं कि वह इस माया जाल में फंस जाता है। उपभोक्ता तक पहुंचने के तमाम हथकंडे बाज़ार अपना रहा है और इस क्रम में फूहड़, अश्लील विज्ञापन सामने आ रहे हैं। एक पानी की बोतल से कार तक के विज्ञापन में अश्लीलता का प्रदर्शन हो रहा है।

---

[111] http:/www.bbc.com/hindi/science/2014/03/140314_modern_life_kids_skj
[112] http:/www.bbc.com/hindi/science/2014/03/140314_modern_life_kids_skj

ऐसा लगता है मानो भारतीय उपभोक्ता केवल अश्लीलता की भाषा ही समझता है। इन विज्ञापनों में बढ़ती अश्लीलता, बच्चों पर गहरा प्रतिकूल प्रभाव डाल रही है। किशोरावस्था की दहलीज पर पहुंचने वाला बालक इन कामुक अश्लील विज्ञापनों को देखकर क्या ग्रहण करेगा ? किस प्रकार के नैतिक विकास को प्राप्त करेगा ? यह जग - ज़ाहिर है, सर्वथा स्पष्ट है। विज्ञापनों में फूहड़ता और अश्लीलता के दर्शन कर बालक मानसिक रूप से कुंठित हो सकता है और यह भी संभव है कि वह भविष्य में अनैतिक कृत्य की ओर अग्रसर हो जाए। विज्ञापनों और फिल्मों में फोटोग्राफी, टी.वी., कैमरा एवं इस प्रकार के अन्य लुभावने उपकरण से बच्चे सर्वाधिक प्रभावित होते हैं तभी तो 'फोटोग्राफी' कहानी का छोटा बालक नींद से उठकर सफ़र में मिले युवा 'रामेश्वर' की सुध लेते हुए अपनी माँ से पूछता है, "अम्मा तच्छबील वाले मामा क आँ एँ?"[113] बालक उस युवा की पहचान तस्वीर वाले मामा के रूप में करता है। बच्चे यंत्रों के प्रति कितने उत्सुक होते हैं यह इस कहानी का बालक प्रमाणित कर जाता है। जैनेंद्र जहां 'खेल' कहानी में बच्चों को तकनीकी दुनिया के विश्व से अनभिज्ञ दिखाते हैं वहीं 'फोटोग्राफी' कहानी में वे तकनीक से प्रभावित समाज में बच्चों की प्रतिक्रिया चित्रित करते हैं।

'अनाड़ी' कहानी के सुवर्णा के मन में भी टी.वी., रेडियो के मोहक विज्ञापनों के प्रति लालसा है | अतः वह भी चाहती है कि नाखून रंग कर हीरोइन माफिक लगे तभी तो मृदुला गर्ग सुवर्णा के परिचयात्मक विवरण में कहती हैं, "मालकिन जानती नई सुवर्णा कितनी फिल्में देखती है। है न टी.वी. हर एक बाई के घर में।"[114] स्कूली जीवन से वंचित न जाने कितनी सुवर्णा हमारे समाज में जीवित है, किंतु उनके जीवन का औचित्य क्या है? अट्टालिकाओं की सफाई हेतु ऐसी न जाने कितनी सुवर्णा सहज निश्चल बचपन से हाथ धो बैठती हैं। उसे भी स्कूल जाने का मन होता है किंतु वह नाखून रंगने और सपने देखने में व्यस्त हो जाती है | सुवर्णा को भी टी.वी. का मोह है। आर्थिक विपन्नता के कारण वह टी.वी. देखने का शौक उन घरों में पूरा करती है जहां वह काम करने जाती है।

---

[113] निर्मला जैन,जैनेन्द्र रचनावली, खंड-4,पृष्ठ सं.-193

[114] मृदुला गर्ग, संगति-विसंगति, पृष्ठ सं.-497

यूनिसेफ़ ने 'The state of the world's children 2017: children in a digital world' रिपोर्ट प्रस्तुत किया। जिसकी भूमिका में UNICEF के कार्यकारी निदेशक एंथनी लेक लिखते हैं -

"It examine the digital divides that prevent millions of children from accessing through the internet new opportunities to learn and someday, to participate in the digital economy, helping to break intergenerational cycles of poverty. It also explores the undeniably dark side of the internet and digital technology, from cyberbullying to online child sexual abuse to dark web transactions and currencies that can make it easier to conceal trafficking and other illegal activities that harm children."[115]

अतः यूनिसेफ के इस रिपोर्ट का लक्ष्य तकनीकी की दुनिया में बच्चों की दशा एवं दिशा की तलाश करना है। इस क्रम में यूनिसेफ ने साइबर क्राइम के शिकार बालकों का ब्यौरा भी दिया है। इसी कड़ी में अनुज कुमार ने 'हिंदी आलोचना और बाल साहित्य की भूमिका' में अपने एक संस्मरण का हवाला देते हुए कहा है, "मेरे एक दोस्त है, 1 दिन पूरे परिवार के साथ टी.वी. पर कोई फिल्म देख रहे थे। किसी लवमेकिंग दृश्य पर झेंप कर उन्होंने चैनल बदल दिया और कुछ और देखने लगे थोड़ी देर बाद उनकी 6 साल की बेटी ने कहा,"अब पापा आप वापस लगा दो वह सीन चला गया।" मसलन, जिस इलेकट्रॉनिक युग में बच्चों का एक्सपोजर इस तरह का हो क्या हम टोपी वाले की तरह सोच सकते हैं या फिर हमें अपने सोचने के तरीके में बदलाव लाना चाहिए"[116] 21वीं सदी के बच्चों का एक्सपोजर अपनी पिछली पीढ़ी से ज्यादा और विभिन्न माध्यमों के जरिए हो रहा है, ऐसे समय में बंदर और टोपी वाली कहानी से काम नहीं चलने वाला है।

115 द स्टेट ऑफ द वर्ल्डस चिल्ड्रेन 2017: चिल्ड्रेन इन ए डिजिटल वर्ल्ड,यूनिसेफ़

116 रेखा पाण्डेय,अनुज कुमार, बाल साहित्य और आलोचना, पृष्ठ सं-14,

आधुनिकता और बाज़ारवाद ने नारी सशक्तिकरण के तहत उसके आर्थिक सफलता का पुरजोर समर्थन तो किया किंतु वहीं उस अर्थोपार्जन को सौंदर्य प्रसाधनों में व्यय करने की ओर भी विवश किया। बाज़ार ने स्त्री को यह एहसास दिलाया कि उसे अपने चेहरे की झुर्रियों को छुपाना है | अतः बाज़ार ने स्त्री के चेहरे पर उम्र का आईना दिखाकर उसे हताश किया अर्थात् "सुंदरी औरतों की संज्ञा भी पुरुषों ने ही तैयार की है। उस संज्ञा के मुताबिक औरतें अपने भाव - श्रृंगार में पगलाई रहें। अपने को बढ़ा - चढ़ाकर खूबसूरत दिखाएं वरना समाज में उनका मान - सम्मान नहीं होगा। आत्मनिर्भर औरत जो धन कामाती है उसका अधिकतम हिस्सा अपने सिंगार - पटार पर ही खर्च कर देती है।"[117] पुरुष ने स्त्री को जिस सौंदर्य जाल में फंसाया, आज भी वह उस सौंदर्य की आसक्ति से मुक्त नहीं हो पाई है | तभी तो आधुनिक माताएं छरहरी काया बरक़रार रखने के लिए शिशु को स्तनपान कराने से पीछे हट जाती है। माताओं के इस व्यवहार का बच्चे पर कैसा प्रभाव पड़ सकता है, इसकी संभावना मृदुला गर्ग 'चकरघिन्नी' कहानी में चित्रित करती है | लेखिका लिखती हैं," उसने (विनीता) सुन रखा था कि माँ ने उसे ज्यादा दिन दूध नहीं पिलाया था।"[118] अपने देह - सौंदर्य के प्रति सचेत स्त्री अपने बच्चे के साथ अन्याय कर जाती है कभी - कभी कामकाजी महिला अपने पब्लिक फिगर को लेकर इतनी सचेत हो जाती है कि वह अपने बच्चे को स्वस्थ बचपन देने में असमर्थ हो जाती है। फलस्वरूप बच्चे और माता का स्वस्थ संबंध विकसित नहीं हो पाता।

4.5 उपभोक्तावाद और मूल्य संक्रमण के दौर में बाल जीवन -

उपभोक्तावादी संस्कृति ने भारतीय मूल्यों का हनन कर पश्चिमी मूल्यों की स्थापना का जो भरसक प्रयास किया उसकी अनुगूंज हिंदी कथा साहित्य में भी सुनाई पड़ती है। हिंदी कहानी के विकास क्रम में सामंतवादी, पूंजीवादी व बाज़ारवादी मूल्यों ने क्रमानुसार दस्तक दी। बाज़ार प्रेमचंद के समय में भी था और अखिलेश के समय में भी। हालांकि दोनों में बाज़ार का स्वरूप भिन्न था। 'ईदगाह' और 'छोटा जादूगर' कहानी का बाज़ार

[117] तसलीमा नसरीन, औरत का कोई देश नहीं,पृष्ठ सं-77

[118] मृदुला गर्ग, संगति-विसंगति, पृष्ठ सं.- 503

'जलडमरूमध्य' के बाज़ार से भिन्न है । सामंती और महाजनी सभ्यता ने जैसे ही पूंजीवादी चोला पहना वैसे ही बाज़ार भी बाज़ारवाद में परिवर्तित हो गया । 'बच्चों की दुनिया में प्रेमचंद लेख' में डॉक्टर कुमुद कला मेहता लिखते हैं, "ग्रामीण वातावरण आर्थिक अभाव के कारण क्षेत्रीय वर्ग समुदाय की व्यवस्था और किशोर मानसिकता के विभिन्न पहलुओं के मनोविश्लेषण का समन्वय है कहानी ईदगाह ।" 'हामिद' और 'छोटा जादूगर' के व्यक्तित्व को बाज़ारवादी दौर की कहानियों में तलाशे तो निराशा होगी क्योंकि बाज़ारवादी दौर में मनु जैसे चरित्र गढ़े गए जो इस समाज का आईना दिखाता है ।

अखिलेश कृत 'जलडमरूमध्य' कहानी अर्थ आधारित सांस्कृतिक संक्रमण को उद्घाटित करती है | कहानीकार ने तीन पीढ़ियों के सांस्कृतिक टकराव को वर्तमान वैश्विक परिदृश्य के संदर्भ में प्रस्तुत किया है । उक्त शीर्षक 'जलडमरूमध्य' ही इस प्रसंग को अपने में समाहित किए हुए है। 'जलडमरूमध्य' जहां समुद्र की दो धाराएं मिलकर भी अंततः संकरी स्थिति में ही रह जाती है,मिल नहीं पाती | ठीक उसी प्रकार तीनों पीढ़ियों की स्थिति है। कहानीकर ने अर्थ आधारित सांस्कृतिक व्यवस्था को केंद्रित कर सहाय बाबू-कौशल्या, चिन्मय - मनजीत और मनु के क्रियाकलापों को चित्रित किया है। समयानुसार क्रमशः तीनों पीढ़ियों में मूल्य परिवर्तन होता है | सहाय बाबू को अपनी ग्रामीण संस्कृति से प्रेम है | इस कारण वे दिल्ली नहीं जाना चाहते जबकि चिन्मय और मनजीत सहाय बाबू को दिल्ली ले आने में प्रयासरत रहते हैं। सहाय बाबू अपनेपन की तलाश में अपने गांव चले जाते हैं किंतु गांव में क्या उन्हें इस अपनेपन की प्राप्ति होती है? नहीं । सहजता और निश्छलता के प्रतीक ग्रामवासी अपनापन देने के बजाय उनके घर की नींव ही हिला डालते हैं | कहानीकार ने यहां अर्थ आधारित व्यवस्था के संदर्भ में बदलते ग्रामीण मूल्यों को स्पष्ट किया है। बाद में सहाय बाबू दिल्ली चले जाते हैं। दिल्ली जाने के बाद भी उन्हें अपने बहु, बेटे और पोते से जो स्नेह प्राप्त होता है, शायद वह स्नेह भी जायदाद के लालच वश ही मिलता है। मनजीत को सहाय बाबू की तबीयत में सुधार की चिंता इसलिए रहती है ताकि जल्द से जल्द गांव की जायदाद बेचकर उन्हें रुपये मिल सके। संपत्ति प्राप्त करने के लिए चिन्मय-मंजीत मनु को भी हथियार के रूप में प्रयोग करते हैं । मनजीत - चिन्मय द्वारा सिखाए जाने पर 'मनु' और एक कदम आगे बढ़कर कहता है,

"पापा मैं बाबा से यह भी कहूंगा कि बाबा मैं तो अपने सारे दोस्तों से बोल चुका हूं कि मेरे बाबा हमारे लिए बहुत कुछ करने जा रहे हैं.."[119] यहां कहानीकार ने दर्शाया है कि किस हद तक अर्थ सत्ता के समक्ष एक छोटा बच्चा भी पारिवारिक संबंधों में अपने स्वार्थ सिद्धि के लिए झूठ पर झूठ बोलता जाता है। कहानीकार ने अर्थसत्ता के समक्ष पारिवारिक मूल्यों को धूमिल होते हुए दर्शाया है |

4.6 हिंदी कहानियों में बाल श्रम -

साहित्य समाज को आईना दिखाता है अतः हिंदी कथा साहित्य बाल श्रम से अनभिज्ञ नहीं है । हिंदी कहानी के आरंभ से समकालीन कथा साहित्य तक रचनाकारों ने बाल - श्रम को चित्रित किया। प्रसाद से चित्र मुद्गल तक साहित्यकारों ने इस विषय पर लेखनी चलाई । बाल - श्रम का अर्थ है ऐसा कार्य जिसमें की कार्य करने वाला व्यक्ति कानून द्वारा निर्धारित वय सीमा से छोटा हो । बाल - श्रम की अवधारणा नई नहीं है अपितु सदियों से बालश्रम जैसा अभिशाप हमारे समाज का हिस्सा रहा है। यूनिसेफ के अनुसार "गरीबी और अशिक्षा बाल श्रम के लिए उत्तरदाई है । इन भयानक समस्याओं के प्रति हमारी संवेदना धीरे - धीरे कम होती जा रही है और इनकी चर्चा हमारे लिए अकादमिक आनंद की सृष्टि करने लगी है।"[120] अशिक्षा और अभाव की विरासत तले दबे हुए वंचित समाज के बच्चों का बचपन छीनने के लिए बाल - श्रम जैसा दानव प्रतीक्षारत रहता है। झोपड़पट्टी, शरणस्थली है उन सभी लोगों की जो संसाधन विहीन, गरीबी से त्रस्त जीवन व्यतीत करने को बाध्य हैं और समाज द्वारा हाशिए पर धकेल दिए गए हैं । इसी कचरे के पहाड़ से संजीवनी बूटी तलाशते नन्हें बच्चे अपना बचपन खो बैठते हैं।

'छोटा जादूगर' कहानी का मुख्य पात्र 'छोटा जादूगर' मात्र 13-14 वर्षीय बालक है जो परिस्थिति और अभाव के कारण मेले में जादू दिखाकर अपना पेट पालता है और अपनी बीमार माँ का इलाज करवाता है । अपने पेशे के अनुरूप उसने अपना नाम रख लिया है

---

119 http://www.hindisamay.com/content/9240/1/%E0%A4%85%E0%A4%96%E0%A4%BF%E0%A4%B2%E0%A5%87%E0%A4%B6--%E0%A4%95%E0%A4%B9%E0%A4%BE%E0%A4%A8%E0%A4%BF%E0%A4%AF%E0%A4%BE%E0%A4%81-

120 Http:/thequint.com/voices

क्योंकि वह अपनी नियति को पहचान चुका है। तभी तो लेखक के द्वारा यह पूछे जाने पर कि "अच्छा तुम इस रुपए से क्या करोगे?"[121] इसका जवाब इस प्रकार देता है कि "पहले भर पेट पकौड़ी खाऊंगा। फिर एक सूती कंबल लूंगा।"[122] इस संदर्भ में गोपाल राय कहते हैं, "बच्चा जादू का खेल दिखा कर अपना पेट पालता और बीमार माँ की सुश्रुषा करता है।"[123]

यशपाल कृत 'कुत्ते की पूंछ' कहानी इस विचार पर आधारित है कि निम्न वर्ग के बच्चों को चाहे जितनी भी सुविधाएं प्रदान कर दी जाए उनका विकास संभव नहीं है। यह जानवर को मनुष्य बनाने जैसा अभियान है। साथ ही कहानी में यह भी कहा गया है कि, "मनुष्यता का चस्का किसी को लग जाने पर उसे जानवर बनाए रखना भी संभव नहीं है।" चेतना के अभाव में अवसर पाकर भी ऐसे बच्चे विकास नहीं कर पाते क्योंकि उनकी चेतना गुलामी की बेड़ियों में जकड़ी होती है। व्यवसायिक कामगार नौकर का परिचय देते हुए लेखक ने बताया कि वह "कढ़ाई माँजने के प्रयत्न में एक छोटा उम्र का लड़का कढ़ाई में ही सो गया था"[124] बालक को इस अवस्था में पाकर लेखक की पत्नी कहती है कि, "इस लड़के के भी दिमाग है। यह भी मनुष्य का बच्चा है और इसे मनुष्य बनाना भी हमारा कर्तव्य है।"[125] जहां इस कहानी में मध्यवर्गीय स्त्री उसे आदमी बनाने को तैयार है तो वहीं 'मामला आगे बढ़ेगा अभी' कहानी में 'मोट्या' के इतने प्रेम, समर्पण और कर्मठता के बावजूद मेम साहब मोट्या के प्रति कोई सामाजिक उत्तरदायित्व नहीं समझती। तभी तो मोट्या क्षुब्ध होकर बोल पड़ता है, "तुमने खाड़ा कटवा दिया न मैम

---

[121]http://www.hindisamay.com/content/9240/1/%E0%A4%85%E0%A4%96%E0%A4%BF%E0%A4%B2%E0%A5%87%E0%A4%B6--%E0%A4%95%E0%A4%B9%E0%A4%BE%E0%A4%A8%E0%A4%BF%E0%A4%AF%E0%A4%BE%E0%A4%81-

[122]http://www.hindisamay.com/content/9240/1/%E0%A4%85%E0%A4%96%E0%A4%BF%E0%A4%B2%E0%A5%87%E0%A4%B6--%E0%A4%95%E0%A4%B9%E0%A4%BE%E0%A4%A8%E0%A4%BF%E0%A4%AF%E0%A4%BE%E0%A4%81-

[123] हिंदी कहानी का इतिहास, गोपाल राय, पृष्ठ सं-225

[124] यशपाल,कुत्ते की पूंछ,http://poshampa.org/kutte-ki-poonchh/

[125] यशपाल,कुत्ते की पूंछ,http://poshampa.org/kutte-ki-poonchh/

साहब !... अपने सामने चांटा मारने कू दिया ना"[126] पूरा पगार माँगने पर जवाब में थप्पड़ पाकर मोट्या प्रतिरोध कर बैठता है और उसका प्रतिरोध अंत में हिंसक हो उठता है । किंतु कुलीनता की हिंसा के हथियार बहुत मौकापरस्त होते हैं । मोट्या के क्रोध की अग्नि को शांत करने हेतु मेम साहब ममता की देवी बन जाती है । वहीं 'बहादुर' कहानी में निर्मला बहादुर को अपनी जागीर समझ उसका दोहन करती है। निर्मला का पूरा परिवार मिलकर बहादुर का मानसिक व शारीरिक शोषण करते हैं । अपने पुत्र किशोर का हमउम्र बहादुर निर्मला के लिए वह नौकर था जो किशोर और उसके अहं को संतुष्ट करता था । यही नहीं बल्कि सामाजिक अहं संतुष्टि के लिए बहादुर पर चोरी का इल्जाम लगा दिया गया । समाज की यह एकांगी धारणा है कि नौकर चोर होते हैं इस धारणा ने बहादुर को भी अपनी चपेट में ले लिया ।

प्रेमचंद कृत 'सौभाग्य के कोड़े' कहानी में दलित 'नथुआ' राय साहब के यहां नौकरी करता है | नथुआ की समाजार्थिक स्थिति दयनीय थी। अतः मेम साहब ने उसके सामने ईसाई मिशनरी स्कूल में चलने का प्रस्ताव रखा । ऐसे में वह इंकार के लहजे में प्रश्न करता है कि, "किरस्तान तो ना बनाओगी?"[127] उसे भंगी बने रहना मंजूर है किंतु मिशनरी की अच्छी जीवनशैली नहीं । नथुआ के किरस्तान बनने के डर से राय साहब ने उसे अपने घर काम पर रख लिया । ऐसे में एक दिन जब वह राय साहब के पलंग पर उछल पड़ा और उस नर्म बिस्तर का आनंद लेने लगा तब राय साहब ने उसे उसकी जाति याद दिलाते हुए कोड़े से मारा था"[128] अतः नथुया ने बतौर बालक जातिवादी दंश झेलते हुये समाजिकता का अहसास किया |

---

[126] यशपाल,कुत्ते की पूंछ,http://poshampa.org/kutte-ki-poonchh

[127]प्रेमचंद, सौभाग्य के कोड़े,http://hindi.pratilipi.com/story/सौभाग्य-के-कोड़े-b-93gmyh1s3zg

[128] प्रेमचन्द्र, सौभाग्य के कोड़े,http://hindi.pratilipi.com/story/सौभाग्य-के-कोड़े-b-93gmyh1s3zg

अतएव बाल सुलभ व्यवहार का दमन कर ‘छोटा जादूगर’, ‘नथुआ’, ‘बहादुर’, ‘मोट्या’ एवं ‘सुवर्णा’ जैसे बाल श्रमिक एक सामाजिक धरातल पर शिक्षा एवं गरीबी के कारण दोहरी यंत्रणा झेल रहे हैं। बाज़ार व बाज़ारवाद ने इन पात्रों की परिस्थितियों को प्रभावित किया तो कभी इन किरदारों ने परिस्थिति को अपने अनुकूल बनाने के लिए प्रतिरोध किया। घरेलू कामकाजी बाल श्रमिकों के प्रति कैसा सामाजिक दृष्टिकोण है ? इन कहानियों के माध्यम से घरेलू कामकाजी बाल मजदूरों के प्रति, निम्न मध्यवर्ग की सोच सामने आ रही है। प्रेमचंद युग से लेकर वर्तमान समय में बाज़ारवाद के कारण क्षुब्ध घरों एवं व्यवसायिक अड्डों पर काम करने वाला “छोटू” कौन है? वह कोई काल्पनिक पात्र नहीं बल्कि हमारे - आपके पड़ोस की दुकान में चाय की ग्लास साफ करने वाला बालक है। अतः बाज़ारवाद ने बालकों की बाल सुलभ वृत्तियों का दमन कर उसे मशीनी बनाना शुरू कर दिया है। बाज़ार ने बालकों को सबसे सस्ते संसाधन के रूप में इस्तेमाल कर उसका स्वाभाविक बचपन तहस - नहस कर दिया | एलेक्ट्रोनिक उपकरणों ने उन्हे समय से पहले बड़ा बना दिया | मिट्टी से खेलने की उम्र में बच्चों की आँखेँ चश्मे के बोझ तले दब गई है | ऐसे में ज़रूरी है कि इन बच्चों को बाज़ारवादी सभ्यता के विषैले प्रभाव से बचाया जाए |

उपसंहार

कहानी साहित्य की सर्वाधिक सशक्त विधा के रूप में उभरकर आयी है | मानव जीवन के विविध पहलुओं को चित्रित करने वाली गतिशील विधा के रूप में कहानी अपना अलग महत्व रखती है। इन कहानियों में जीवन के विविध रूपों का वहन विविध पात्रों ने किया है। मात्र वयस्क पात्रों ने ही नहीं अपितु बाल पात्रों ने भी जीवन के विविध पक्षों की अभिव्यक्ति की है, किन्तु अब तक वे उपेक्षित ही रहे हैं। भले ही हिंदी में विशुद्ध बाल - साहित्य के रचनाकारों की संख्या न के बराबर रही हो, लेकिन वयस्कों के लिए लिखने वाले कितने ही रचनाकारों ने समृद्ध बाल - साहित्य की रचना की है। हिंदी में जहाँ अनुदित साहित्य के रूप में बाल-साहित्य या बाल - कहानियां (साहित्य) उपलब्ध हुई, वहीं मौलिक कहानियाँ भारतेंदु युग से ही उपलब्ध होनी शुरू हो गई थी। शिवप्रसाद सितारे हिंद को कुछ विद्वानों ने बाल कहानी के सूत्रपात का श्रेय दिया है। उनकी कुछ कहानियाँ हैं – 'राजा भोज का सपना', 'बच्चों का ईनाम', 'लड़कों की कहानी'। हिंदी में बाल साहित्य का विकास उन्नीसवीं सदी में ही होने लगा था। चंद्रधर शर्मा गुलेरी की कहानी 'उसने कहा था' को प्रथम सशक्त बाल मनोविज्ञान संबंधी कहानी माना जा सकता है। यह कहानी 1915 में ही लिखी गई थी। यह विशुद्ध बाल साहित्य की श्रेणी में तो नहीं आता परंतु बाल सुलभ चंचलता, जिज्ञासा तथा बाल मन के संस्कारों का सजीव चित्रण है। 'लहना सिंह' की स्मृति में बचपन की एक छोटी सी घटना घर कर जाती है और वह इसके लिए इतना बड़ा बलिदान देने को तैयार हो जाता है। बचपन की स्मृति मानो प्रेम और बंधुत्व की मिसाल बन जाती है। लहना सिंह ने बचपन में एक आठ वर्षीय लड़की से पूछा था, 'तेरी कुड़माई हो गई ?' उत्तर में "धत्" सुनकर वह सामान्य

नहीं रह पाया। उसी स्मृति से प्रभावित होकर बाद में वह युद्धभूमि में उसके पति तथा पुत्र की रक्षा हेतु जान की बाज़ी लगा देता है।

भूमंडलीकरण के दौर में, यंत्रवत तेज़ दौड़ती ज़िन्दगी में बच्चे अकेलेपन, अजनबियत और कुंठा के शिकार होते चले जा रहे हैं | वे महानगरी यथार्थ एवं समाजार्थिक परिस्थितियों में कास्ठ प्रतिमा सा व्यवहार करने पर विवश है। ऐसे समय में रचनाकार मानव जीवन के विभिन्न पहलुओं पर अपनी पैनी दृष्टि रखता है। अतएव हिंदी कहानियों में पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन में बालकों की दशा विशेष और उस दशा विशेष के लिए उत्तरदायी तत्वों की ओर संकेत किया गया है । ऐसी परिस्थितियों में, बदलते परिवेश के साथ बालकों की ऊहापोह भरी स्थिति के पीछे ज़िम्मेदर सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक तत्वों का अध्ययन आवश्यक हो जाता है। मोटे तौर पर देखा जाए तो हिंदी कहानियों में प्रौढ़ता की शुरुआत प्रेमचंद युग से मानी जाती है। अतः प्रेमचंद ने अपनी कहानियों में आए बाल पात्रों का मनोवैज्ञानिक एवं यथार्थपरक विवेचन किया गया है।

मोटे तौर पर कथा जगत में बाल पात्रों के दो आयाम चिन्हित किए जा सकते हैं सक्रिय - एवं निष्क्रिय। सक्रिय पात्र वे हैं जो, संपूर्ण घटनाओं और परिस्थितियों को संचालित करते हैं और निष्क्रिय पात्र वे हैं जो, परिस्थितियों से संचालित हो रहे हैं | कथा जगत में जो सक्रिय - निष्क्रिय बाल पात्र हैं उनको कालक्रम में नहीं बांटा जा सकता, क्योंकि प्रेमचंद से लेकर मृदुला गर्ग एवं चित्रा मुद्गल के साहित्य में सक्रिय एवं निष्क्रिय पात्रों ने अपनी- अपनी उपस्थिति दर्ज कराई है। अमूमन कथा साहित्य में बाल पात्र, मुख्य पात्रों के लिए हथियार या सेतु के रूप में चित्रित किये गए हैं | अतएव अधिकांशतः

वे परिस्थितियों के कृतदास के रूप में चित्रित हुए हैं। इसके अलावा बाल-पात्र बहुधा आधुनिकता एवं भूमंडलीकरण के परिणामस्वरूप सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों की उपज के रूप में आए हैं | ये बालक बिगड़े दाम्पत्य में टूटे हुये पुल के रूप में भी चित्रित हुए हैं। सामंतवादी और पूंजीवादी दौर में बच्चे बाल सुलभ चंचलता छोड़ 'हामिद' और 'छोटा जादूगर' बनने पर विवश है।

हिंदी कथा साहित्य का आरंभिक सोपान सामंतवादी-पूंजीवादी शक्तियों से प्रभावित रहा, तो समकालीन कथा साहित्य पर भूमंडलीकरण व बाज़ारवादी प्रभाव हावी है। अतः समकालीन संदर्भ में बाल-पात्रों की दुर्दशा के लिए ज़िम्मेदार कारकों की पड़ताल करने के लिए उपभोक्तावादी जीवनशैली को समझना आवश्यक हो जाता है। प्रेमचंद ने जिस "हामिद" नामक पात्र को गढ़ा है, उसे समझने के लिए महाजनी सभ्यता, उस समय के बाज़ार के स्वरूप एवं बाज़ार को प्रभावित करने वाले कारकों को समझना आवश्यक है। वहीं दूसरी ओर अखिलेश कृत 'जलडमरूमध्य' में बालक 'मनु' को समझने के लिए वर्तमान उपभोक्तावादी संस्कृति एवं बाज़ारवादी मूल्यों को समझना आवश्यक हो जाता है, क्योंकि बाज़ारवाद एवं उपभोक्तावाद से काटकर "मनु" के व्यक्तित्व को नहीं समझा जा सकता | बाजरवादी प्रभाव को अखिलेश ने 'जलडमरूमध्य' में बख़ूबी दर्शाया है। अपने मूल में टकाधन संस्कृति के ख़तरे को व्यक्त करती है ये कहानी तीन पीढ़ियों के मूल्य क्षरण का दस्तावेजीकरण करती है | चिन्मय और मंजीत द्वारा 'मनु' को हथियार के रूप में प्रयोग कर पिता की संपत्ति हड़पने के क्रम में, बालक मनु पर जो प्रभाव पड़ता है वह बाज़ारवादी मूल्य - क्षरण को दर्शाता है। संपत्ति प्राप्ति के क्रम में 'मनु' द्वारा अपने दादा से बोला गया झूठ पारिवारिक संबंधों में स्वार्थ - सिद्धि को रेखांकित करता है।

अतबाज़ारवाद के विषैले प्रभाव एवं परिणाम को समझे बिना विज्ञापन :, तकनीक एवं श्रम के दोहन को बाल जीवन के संदर्भ में नहीं समझ सकते।

भूमंडलीकरण के दौर में पति - पत्नी के बिगड़ते दांपत्य के परिणामस्वरूप तलाक़शुदा माँ -बाप के संतान की नियति टूटे हुए पुल की तरह हो जाती है | अस्तित्ववाद एवं बाज़ारवाद के फलस्वरूप उद्दाम यौन लालसा के रंग में सराबोर स्त्री - पुरुष किसी और के साथ "एक और ज़िंदगी" बिताने को तत्पर हैं | जबकि पति - पत्नी के बीच की खाई को न पाट पाने वाली संतान की नियति घुन की तरह पीसते रहने की हो जाती है। तलाक़शुदा दम्पति की संतान का अस्तित्व अधिकतर सेतु या हथियार के रूप में होता है। सेतु या हथियार की भूमिका का निर्वहन न कर पाने की स्थिति में उस संतान रूपी पुल को टूट कर गिर जाना पड़ता है। मोहन राकेश की कहानी "एक और ज़िंदगी" में तलाक़शुदा 'प्रकाश' और 'वीणा' की संतान 'पलाश' का भविष्य इस ओर इशारा करता है कि कहीं उसकी नियति 'आपका बंटी' उपन्यास के बंटी की तरह न हो जाए। पलाश पूरी तरह से परिस्थितियों द्वारा संचालित बालक है, वहीं कमलेश्वर कृत "राजा निरबंसिया" कहानी में 'चंदा' और 'जगपति' के सबंध टूटने का परिणाम नवजात शिशु को भोगता है, उस नवजात बच्चे की दशा और दिशा दोनों संशयग्रस्त है।

वर्तमान समय में एक ओर समाजार्थिक परिस्थितियों से संचालित मेहनतकश बाल श्रमिक हैं, तो दूसरी ओर घोर आधुनिकता के अंधियारे में गोते लगाते बच्चें भी हैं। 'छोटा जादूगर' भी सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं के कारण बचपन में ही बूढ़े की भूमिका निभा जाता है। ऐसा नहीं है कि उसमें बाल सुलभ वृत्तियाँ नहीं हैं, बल्कि सच

तो यह है कि बाल सुलभ वृत्तियों का हनन करना उसकी नियति बन गई है। हिंदी कहानी ने अपने विकासक्रम में बाल श्रम की समस्या को भी रेखांकित किया है। सौभाग्य के ' 'कोड़े, 'छोटा जादूगर',' बहादुर',' कुत्ते की पूँछ',' अनाड़ी' इत्यादि कहानियों में घरेलू कामगार नौकर एवं व्यावसायिक नौकरों की दशा का चित्रण किया गया है, साथ ही इन कहानियों के माध्यम से बाल श्रमिकों के प्रति एवं नौकरों के प्रति निम्न मध्यवर्गीय एवं उच्च मध्यवर्गीय समाज की मानसिकता उभर कर सामने आती है। बाज़ारवाद ने न्यूनतम संसाधन में अधिकतम मुनाफ़े का जो सूत्र दिया है, उसी सूत्र के अनुरूप मध्यवर्गीय समाज ने बाल श्रमिक को सस्ते एवं किफ़ायती मज़दूर के रूप में चयनित किया। दास प्रथा के अंतर्गत भी बाल श्रमिकों की उपस्थिति दर्ज़ हुई थी किन्तु बाज़ारवादी दौर में बाल श्रमिकों की ज़बरदस्त उपस्थिति दर्ज हुई है, क्योंकि बाज़ार की नियति श्रमिकों को श्रमिक ही बने रहने देने की है। बाज़ार नहीं चाहता कि झोपड़-पट्टियों और मलिन बस्तियों में शिक्षा की लौ जले, क्योंकि शिक्षित एवं ग़रीब बाल मज़दूर बाज़ार के लिए कम लागत में उपलब्ध टिकाऊ संसाधन हैं।

संदर्भ सूची

संदर्भ एवं सहायक ग्रन्थ सूची

1. राजेन्द्र यादव : प्रभा खेतान : अभय कुमार दूबे, पितृ सत्ता के नये रूप, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003

2. तसलीमा नसरीन, औरत का कोई देश नहीं, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2009

3. निर्मला जैन, जैनेन्द्र रचनावली, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, 2014

4. चंद्रधर शर्मा गुलेरी, उसने कहा था,राजकमल प्रकाशन,नई दिल्ली, 2011

5. डॉ.ए.एम. चोचा, मनोविज्ञन के सिद्धान्त, रावत प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015

6. डॉ. चंचल वर्मा सिंह, बालकों की भावनाओं व व्यक्तित्व का अध्ययन(समान्य एवं अपराधी बालक), कल्पज़ पब्लिकेशन, दिल्ली, 2011

7. प्रोफ. हरीश कुमार, सम्पूर्ण किशोर मनोविज्ञन, सिक्षा निकेतन, दिल्ली, 2016

8. डॉ. सुधा ए. एस., धर्मवीर भरती के कथा साहित्य में मनोवैज्ञानिकता, अभय प्रकाशन, कानपुर , 2016

9. देवेंद्र कुमार(अनुवाद), फ्रायड : मनोविश्लेषण (A General Introduction to Psycho-analysis), राजपाल प्रकाशन, 2017

10. देवेन्द्रनाथ शर्मा, मनोविश्लेषण और साहित्यालोचन, भारती भवन प्रकाशन, पटना 1969

11. अनुज कुमार, रेखा पाण्डेय, बाल साहित्य और आलोचना, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2016

12. नमिता सिंह, स्वतंत्र्योतर हिंदी बाल साहित्य, साहित्य अकादमी, दिल्ली, 2012

13. के. पी. पाण्डेय, नवीन शिक्षा मनोविज्ञान, विश्विद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2009

14. चित्रा मुद्गल, संगति विसंगति, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2009

15. मृदुला गर्ग, शहर के नाम, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2011

16. नंद भारद्वाज, संस्कृति,जनसंचार और बाजार, सामयिक प्रकाशन, पटना, 2007

17. मंजू शर्मा, ए मैनुवेल ऑफ़ सायकोलोजी, राज प्रिंटर्स, गढ़ रोड, मेरठ, 2010

18. सिन्हा, सच्चिदानन्द, भूमंडलीकरण की चुनौतियाँ, किताबघर, दिल्ली, 2012

19. मिनिस्टरी ऑफ हेल्थ एंड साइकोलोजी, ट्रेनिंग मैनुवेल फॉर साइकोलोजिस्ट्स, आरोग्य सुखसंपदा, नई दिल्ली 2016

20. विष्णु प्रभाकर, रमेशचन्द्र शाह, प्रसाद रचना संचयन, साहित्य अकादमी,नई दिल्ली 2015

21. Emile ; or concerning education, Jean Jacques russeau, Boston : D.C. health & company 1886

22. श्यामाचरण दुबे, समय और संस्कृति, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016

23. गोपाल राय, हिन्दी कहानी का इतिहास 3, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016

24. अर्चना वर्मा, राजपाट तथा अन्य कहानियाँ, मेधा पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 2009

वेब संदर्भ :

1. https://www.sahityashilpi.com/2009/06/blog-post_22.html?m=1

2. http://kavitakosh.org/kk/भागी_हुई_लड़कियां_/_आलोक_धन्वा

3. https://feminisminindia.com/2017/03/05/mahadevi-varma-essay-hindi/

4. https://www.unmultimedia.org/radio/hindi/archives/6309/#.XADlAaThWEc

http://www.mazdoorbigul.net/archives/2467

5. https://www.google.co.in/amp/s/www.bhaskar.com/amp/world-news-in-hindi/news/INT-bleak-picture-of-american-kids-with-mental-disorders-4268237-PHO.html

6. https://www.google.co.in/amp/s/www.bbc.com/hindi/amp/international-39524078

7. https://www.bbc.com/hindi/international-45860318

8. https://www.bbc.com/hindi/media-45451143

9. https://m.dw.com/hi/गाजा-विवाद-में-मरते-मासूम/g-17789481

10 . http://www.mazdoorbigul.net/archives/7710

11. https://hi.m.wikipedia.org/wiki/एलन_कुर्दी_की_मृत्यु

12 . http://kavitakosh.org/kk/युद्ध_और_बच्चे_/_उमेश_चौहान

13.http://kavitakosh.org/kk/बच्%E2%80%8Dचे_काम_पर_जा_रहे_हैं_/_राजेश_जोशी

14. http://kavitakosh.org/kk/सीरिया_के_मुसलमान_बच्चे_/_विहाग_वैभव

15.https://www.google.co.in/amp/s/khabar.ndtv.com/news/world/un-report-on-gaza-israel-apalestine-both-sides-may-be-guilty-of-war-crimes-774280/amp/1%3fakamai-rum=off

16. https://www.google.co.in/amp/s/www.hindikiduniya.com/social-issues/child-labour/amp/

17..https://www.google.co.in/amp/s/childlabourcia.wordpress.com/2015/09/13/child-labour-indias-hidden-shame-shilpa-kannan-bbc-news-delhi/amp/

18. https://www.globalhungerindex.org/results/

19. https://hi.m.wikipedia.org/wiki/बाल-श्रम

20. https://www.pravakta.com/indias-enlightened-voice-of-the-rights-of-children-of-the-earth/

21. https://www.bbc.com/news/business-2594798

22. https://hindi.news18.com/news/world/america-state-of-worlds-children-2017-a-report-by-unicef-1195915.html

23. http://thewirehindi.com/9830/vinayak-damodar-savarkar-rss-and-freedom-movement

24. https://www.bbc.com/hindi/india-43238636

25. sahityashilpi.com

26. hindikunj.com

27. poshampa.org

28. hindi.oneindia.com

30. gadyakosh.org

31. hindisamay.com

पत्र पत्रिकाएँ :

1. UNICEF, UNICEF/WHO/WOrld bank group joint child malnutrition estimates, 2018

2. unicef,the state of world's children report 2013 : children with disabilities

3. unicef,the state of the world's children 2017 : children in a digital world

4. शुक्ल,कुमार,विनोद,आजकल,दिल्ली,नवम्बर 2018

5. राजेंद्र यादव, अर्चना वर्मा, हंस : लंबी कहानियाँ(खंड-1), हंस के पच्चीस वर्षों का चयन(1986-2011)

6. A Manifesto for the fast world - Thomas L.Fidman, 28 march 1999